www.antrashabdshakti.com
संपादक : डॉ. प्रीति समकित सुराना
वारासिवनी (म.प्र.)

पं.क्र.(04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
प्रकाशन एवं बहुद्देशीय संस्था

साहित्यिक वेब अंक
1 से 31 जुलाई 2026
(मासिक साझा संकलन)

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

जुलाई 2026 : एक दृष्टि में

जुलाई 2026 अन्तरा शब्दशक्ति के लिए साहित्य-साधना, सृजनात्मकता और रचनात्मक संवाद का एक सशक्त अध्याय रहा। पूरे माह देश के विभिन्न राज्यों से जुड़े वरिष्ठ एवं नवोदित रचनाकारों ने अपनी मौलिक रचनाओं के माध्यम से साहित्य को समृद्ध किया। प्रत्येक वेबअंक में विविध साहित्यिक विधाओं का संतुलित समावेश रहा, जिसने पाठकों को विचार, संवेदना और सृजन का सुंदर संगम प्रदान किया।

इस माह चार केंद्रीय रचनाकार विशेषांक प्रकाशित किए गए, जिनमें सुधा शर्मा (राजिम, छत्तीसगढ़), सोनम लड़ीवाला (जयपुर, राजस्थान), रीति झा (जमशेदपुर) तथा प्रणव राज (कैमूर) के साहित्यिक अवदान को विशेष रूप से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया।

मासिक साहित्यिक झलक

कुल वेबअंक :	31
दैनिक प्रकाशित रचनाकार :	95
केंद्रीय रचनाकार विशेषांक :	4
कुल प्रकाशित रचनाकार :	99

इस माह की प्रमुख विशेषताएँ

- देश के विभिन्न राज्यों से रचनाकारों की सक्रिय सहभागिता।
- वरिष्ठ एवं नवोदित साहित्यकारों को समान अवसर।
- कविता, गीत, ग़ज़ल, दोहा, मुक्तक, लघुकथा, लेख सहित विविध साहित्यिक विधाओं का प्रकाशन।
- मौलिक, गुणवत्तापूर्ण एवं प्रभावशाली रचनाओं को प्राथमिकता।
- साहित्य के माध्यम से मानवीय संवेदनाओं, सामाजिक सरोकारों एवं सकारात्मक चिंतन को सशक्त अभिव्यक्ति।

संपादकीय संदेश

साहित्य का उद्देश्य केवल प्रकाशित होना नहीं, बल्कि पाठकों के मन में विचारों की ज्योति प्रज्वलित करना है। उत्कृष्ट रचना वही है जो पढ़े जाने के बाद भी स्मृतियों में बनी रहे और समाज को सकारात्मक दिशा देने का सामर्थ्य रखे। अन्तरा शब्दशक्ति सदैव ऐसे सृजन को मंच प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है जो साहित्यिक गरिमा, भाषा की शुद्धता और सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वहन करता हो।

अगस्त 2026 हेतु आमंत्रण

सभी साहित्य साधकों से सादर अनुरोध है कि आगामी वेबअंकों एवं केंद्रीय रचनाकार विशेषांक के लिए अपनी मौलिक, अप्रकाशित एवं स्तरीय रचनाएँ निर्धारित समय पर प्रेषित करें।

रचना भेजते समय कृपया ध्यान रखें–

- रचना पूर्णतः मौलिक एवं अप्रकाशित हो।
- भाषा, व्याकरण एवं शिल्प की शुद्धता का विशेष ध्यान रखें।रचना के साथ
- संक्षिप्त साहित्यिक परिचय तथा स्पष्ट फोटो संलग्न करें।
- संपादकीय निर्णय अंतिम एवं सर्वमान्य होगा।

आइए, शब्दों की इस सतत साहित्यिक यात्रा में सहभागी बनें और अपनी सृजनशीलता से हिन्दी साहित्य को और अधिक समृद्ध एवं प्रभावशाली बनाएँ।

सादर
डॉ. प्रीति समकित सुराना
प्रधान संपादक
अन्तरा शब्दशक्ति

1/07/2026 से 31/07/2026 तक
वेबअंक में प्रकाशित रचनाकारों की सूची

01.07.2026
1. मृत्युंजय कुमार श्रीवास्तव
2. मुक्ति भंडारी "ममता"
3. डॉ प्रमोद परिहार
4. किरण मोर
5. डॉ मंजूषा पांडेय

02.07.2026
1. प्रदीप कुमार अरोरा
2. पुष्पा अरविंद शर्मा
3. प्रवीणा सिंह राणा "प्रदन्या"
4. डॉ किशोर सोनवाने "अनीस"
5. डॉ रागिनी स्वर्णकार शर्मा

03.07.2026
1. योगी नारायण नाथ
2. अनिल कुमार मिश्र
3. डॉ निरुपमा वर्मा
4. प्रणव राज

04.07.2026
1. नमिता गुप्ता "मनसी"
2. माधवी उपाध्याय
3. राकेश नमित
4. कृष्ण भारतीय
5. डॉ वासिफ काज़ी

05.07.2026
1. रिंकी अग्रवाल 'प्राची"
2. जाह्नवी मालेवार
3. निशा कोठारी
4. सुरेख अग्रवाल "स्वरा"
5. रूपम राज

06.07.2026
सुधा शर्मा, राजिम (छ.ग.)
(केंद्रीय रचनाकार विशेषांक)

07.07.2026
1. जीनस कँवर
2. नवीन माथुर पंचोली
3. सुरेश गुप्ता
4. राजकुमार राज
5. अभिनव अरुण राणसी
6. कमलेश कंवल

08.07.2026
1. शिवराम उपाध्याय मुकुल मतवाला
2. निर्मल राय
3. अजय कुमार शर्मा

09.07.2026
1. मुकेश दुबे
2. माधुरी मिश्रा
3. सोनिया अक्स
4. ब्रह्मदेव बन्धु

10.07.2026
1. डॉ पवन कुमार पाण्डेय
2. मीनाक्षी सुकुमारन
3. समीर द्विवेदी 'नितांत'
4. रोहित कुमार

11.07.2026
1. डॉ प्रीति समकित सुराना
2. कविता नामदेव
3. मनोज जैन
4. रोहित कुमार

12.07.2026
सोनम लड़ीवाला, जयपुर (राज.)
(केंद्रीय रचनाकार विशेषांक).

13.07.2026
1. ऊषा नौगरहिया
2. नीतू रवि गर्ग
3. विशाखा सिंघल

14.07.2026
1. रवि खण्डेवाल
2. जय कृष्ण चांडक "जय"
3. राहुल आयन
4. नंदिता तनूजा
5. प्रवीण सिंह राणा

15.07.2026
1. कमलेश श्रीवास्तव
2. अदिति रूसिया
3. पद्मा मिश्रा

16.07.2026
1. रोहित कुमार
2. वीरेंद्र हीरालाल पथरिया
3. नवीन माथुर पंचौली
4. डॉ ऋतु अग्रवाल
5. डॉ भारती वर्मा बौड़ाई

17.07.2026
1. डॉ प्रीति समकित सुराना
2. नमिता राकेश
3. शिवशंकर दुबे (गंगेले)

18.07.2026
1. डॉ पवन कुमार पांडेय

19.07.2026
रीति झा, जमशेदपुर
(केंद्रीय रचनाकार विशेषांक).

20.07.2026
1. जाह्नवी मालेवार
2. स्मृति गुप्ता
3. डॉ मंजुला पांडेय
4. रश्मि अभय
5. बुशरा तबस्सुम

21.07.2026
1. रेनू शब्दमुखर
2. पुष्पाअरविन्द शर्मा
3. दिनकर राव दिनकर
4. अमितारवि दुबे
5. अनिल शर्मा "तन्हा"

22.07.2026
1. डॉ. अम्रात शुक्ला
2. स्मृति गुप्ता
3. मनीष कुमार पाटीदार
4. सुरेंद्र पाल सिंह (बिट्टू)
5. साधना छिरोल्या

23.07.2026
1. नमिता दुबे "मिशा"
2. रत्ना पाण्ड्य
3. मालिनी त्रिवेदी पाठक
4. नीरजा वर्मा
5. मोहन जोशी "पियूष"

24.07.2026
1. मंजू सरावगी मंजरी
2. प्रदीप कुमार अरोरा
3. भागचंद गुर्जर
4. डॉ सरोज दुबे 'विधा'
5. एडवोकेट राधा सोहाने

25.07.2026
1. सिद्धि ब्रज रतले
2. सरोजिनी चौधरी
3. राजेंद्र रायपुरी
4. प्रोफेसर शरद नारायण खरे
5. रत्नदीप खरे

26.07.2026
प्रणव राज, कैमूर
(केंद्रीय रचनाकार विशेषांक)

27.07.2026
1. संगीता गुप्ता
2. पुष्पा सिन्हा
3. सम्यक कोचर
4. चंद्रकांता अग्रवाल
5. हृदयेश भारद्वाज

28.07.2026
1. राजश्री तिवारी
2. परिणीता सिन्हा
3. डॉ सुकेशिनी दीक्षित
4. मीना शर्मा
5. साधना बैढन

29.07.2026
1. डॉ. प्रीति समकित सुराना
2. श्रीधर कृष्णार्थ

30.07.2026
1. ऋतु कोचर, कटंगी
2. सम्यक कोचर, कटंगी
3. श्रेया कोचर, कटंगी
4. श्रुति कोचर, कटंगी
5. डॉ प्रीति समकित सुराना

31.07.2026
1. मंजुलता गुप्ता निखरा
2. स्वाति जैन
3. मीरा भार्गव सुदर्शन
4. उद्देश्या तिवारी 'उदय'
5. वाई.वेद प्रकाश

रचनाएँ प्रेषित करने हेतु संपर्क सूत्र :- antrashabdshakti@gmail.com | 9009423393 / 9009465259

तजुर्बे

आपकी झुर्रियों में समय की बस कहानी है
हर लकीरों में जीवन की गहरी निशानी है...!

हँसते हुए चेहरे ने कितने ग़म सँभाले होंगे
अपनों के लिए कितने सपने सजाए होंगे....!

सफ़र ने सिखाया गिरकर भी उठ जाना
दर्द को छुपाकर भी मुस्कुराते रह जाना....!

उम्र तो बस तन पर लिखी एक दास्तां होती है
तजुर्बे ही इंसान की असली पहचान होती है....!!

मृत्युंजय कुमार श्रीवास्तव

'उर उमंग भरी'

उर उमंग भरी, नव तरंग गृही,
चेतना ने अब नव्यता गढ़ी।

जागृत हो रहा हैं चिन्तन अब,
एकाग्रता श्वासों में है पली।

दूर हटाकर ध्वांत सब मन का,
सुषमा अंतस में है भरी।

करके तन्मय मधुर धुन में,
हो झंकृत उमंग बढ़ी।

विलुप्त हुआ नैराश्य है मन से,
प्रत्याशा है अब सन्निकट खड़ी।

है सजल नयन अब प्रसन्नता लिये,
स्वप्न मंजरी देखो अब पल रही।

और गहन होगा मंतव्य सब,
नवांकुर की चाह अब है बढ़ी।

बेला परिवर्तन है सम्मुख खड़ी,
नव प्रभा अंतर्मन से जा मिली।

हो सुशोभित दीप्ति अब हिय में,
झूम उठा उर, लगे अब सब सही।

मुक्ति भंडारी 'ममता'

मन की पीड़ा

क्या गलती थी उस बाप की,
शायद वो बेटी अमीर ना थी।
साल-भर उसे पढ़ाया था,
ना जानें कहाँ से पैसा लाया था।

अपने सपनों को मारा था,
बेटी के लिए ना हारा था।
पर प्रशासन से वो हार गया,
रो-रो कर उसने बुरा हाल किया।

यह कहानी कोई नई नहीं थी,
ऐसी कहानी कई बार घटी थी।
बेटियों को कई बार रोना पड़ा है,
प्रशासन मूक-बधिर ही रहा है।

बदलो नियम, बदलो नीति,
देश में ना चलेगी दोहरी रीति।
कब तक पिता यूँ ही तड़पेगा,
कब तक अपना सिर यूँ ही फोड़ेगा।

डॉ. प्रमोद परिहार
रुदावल, भरतपुर
राजस्थान

अनदेखी सी चाहत

चाहा था पर न पाया था
अपनों ने ही भरमाया था
जीवन के सूने आंगन में
उसी ने नव संचार किया,
हाथ थामकर उसने मेरा
फिर मेरा सत्कार किया।

मन के अंधियारे में किसने
नेह द्वीप उजियार दिया।

झेल रही थी विरह वेदना
तमस संग पलकें भी बोझिल
आस एक बस झांक रही
झिरी से मद्धिम झिलमिल
भर उजास उसने फिर आकर
एक नया संसार दिया।

मन के अंधियारे में किसने
नेह द्वीप उजियार दिया।

कर्त्तव्य वेदी पर चढ़ी हुई
अतीत को भूल गई
हरी भरी फिर पतझड़ होकर
जिन्दगी ही निर्मूल भई
सिंचित किया विगत ने ही
बन के नीव आधार दिया।

मन के अंधियारे में किसने
नेह द्वीप उजियार दिया।

था अदृश्य जाना पहचाना
नाव चली मांझी न कोई
हां वो पिछला प्यार ही है
कुछ जागी सी कुछ सोई
डूब रही थी नैया मेरी
थाम उसे पतवार दिया।

मन के अंधियारे में किसने
नेह द्वीप उजियार दिया।

किरण मोर कटनी

विश्वास की नींव

माँ का ममतामयी आँचल
लहराता रहता है
विशाल सागर की तरह,
जिसमें समेट लेती है
वह अपने शिशुओं को
अनमोल मोती की तरह।

जीती है पल-प्रतिपल
उनके लिए।
न्योछावर करती है
तन, मन, धन
उनकी मुस्कान
देखने के लिए।

गला घोट देती है
अपनी इच्छाओं का,
अरमानों का।
होम कर देती है
अपना जीवन
उनको खुशी
देने के लिए।

बिता देती है
सारा जीवन
उनके लिए।
लड़ जाती है
आँधी व तूफान से।
खुद भूखी-प्यासी
रहकर भी
मिटाती है उनकी
भूख व प्यास।

पर हिल जाती है
उसके विश्वास की नींव
उस दिन,
जब छोड़कर चले जाते हैं
उसे उसके बच्चे।
बस जाते हैं,
रम जाते हैं
दूर, कहीं दूर
विदेश में।
भुला देते हैं उसे।
रह जाती है तब वह
भरी दुनिया में अकेली।
हो जाती है
तिल-तिल कर
मरने पर मजबूर।

डॉ. मंजुला पांडेय

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

अकेले रहना सीख लिया

समय तो लगा, पर मैंने
अकेले जीना सीख लिया।
संसार में रहना सीख लिया,
अकेले रहना सीख लिया।

ग़म हो या ख़ुशी, मैंने हर पल
को अकेले बिताना सीख लिया।
आँसू पोंछने पास कोई हो न हो,
कोई ग़म नहीं, अब मैंने आँसुओं
के पीछे मुस्कुराना सीख लिया।
अकेले रहना सीख लिया।

सौग़ात तो मिली है ख़ुशी की,
पर गले लगाने पास कोई नहीं।
पर किसी से शिकवा तो नहीं,
मैंने मन ही मन हौले से खुद को
बहलाकर गुनगुनाना सीख लिया।
मैंने अकेले रहना सीख लिया।

पुष्पा अरविंद शर्मा

रीता प्याला

दिन दोपहरी साँझ - सबेरे
बदले रंग अखियन में तेरे,
हर रंग की है छटा सुहानी
संकेतों की रचती है बानी,
बता कितने संकेत पढ़ूं मैं
तूने शब्दकोश ही रच डाला,
तृप्त हुआ है "रीता प्याला"।।

प्रदीप कुमार अरोरा

धरा का श्रृंगार

तपती धरती की छाती पर, जब ठंडी बूंदें गिरती हैं,
सदियों की प्यासी मिट्टी से, भीनी खुशबू बिखरती है।
नभ से उतरी अमृत-धारा, हर ओर निराला निखार हुआ,
लो देखो ,वर्षा की बौछार से,धरा का नया श्रृंगार हुआ।

चम-चम चमकी बिजली नभ में, घनघोर घटाएं छाई हैं,
पेड़ों की सूखी साखों पर, फिर नई कोपले आई हैं।
झरनों ने बदला राग अपना, नदियों में बहती धार हुई,
रिमझिम-रिमझिम इन बूंदों से,आज प्यासी धरती गुनगुनाई है।

कोयल की कूक, पपीहे की टेर, मोर भी पंख फैलाता है,
बादल का दूत बन सावन, हर दिल की प्यास बुझाता है।
पल्लव-पल्लव ने रूप नया, इस सावन में पाया है,
रंग-बिरंगी चुनर ओढ़, वसुधा ने रूप सजाया है।

यह वर्षा की बौछार नहीं, जैसे कोई वरदान मिला,
मुरझाए हुए जीवन को फिर, एक नया वितान मिला।
हर बूंद गाती मधुर गीत, हर कोना महक-महक उठा,
वर्षा की पावन बौछार से, धरा का रोम-रोम चहक उठा।

स्वरचित मौलिक प्रवीणा सिंह राणा "प्रदन्या"

कविता

शीर्ष पर आसीन है,
वह बहुत ही दीन है।

यूँ निगाहें फेरना,
इश्क़ की तौहीन है।

दोस्त का देना दग़ा,
ये प्रथा प्राचीन है।

फ़ोन पर बातें हुई,
दिल को अब तस्किन है।

हो कड़ी उसको सजा,
ज़ुर्म जब संगीन है।

कर रहे सब तो नशा,
हर कोई शौक़ीन है।

हादसा शायद हुआ,
शह जो गमगीन है।

आजकल फुर्सत नहीं,
काम में तल्लीन है।

आज संसद में दिखा,
क्या ग़ज़ब का सीन है।

देश की आवाम भी,
रेत पर इक मीन है।

कद है सागर का बड़ा,
हाँ मगर नमकीन है।

डॉ किशोर सोनवाने
'अनीस'
लाँजी (म. प्र.)

प्रण

यह मेहराब नहीं,
यह मनुष्य का अदम्य प्रण है ..
जो सदियों से खड़ा है
आँधियों के विरुद्ध,
समय के थपेड़ों के विरुद्ध।

ये दीवारें गूँगी नहीं,
ये इतिहास की जिह्वा हैं
जिन पर लिखी है
श्रम की इबारत,
संघर्ष की अमिट गाथा।

उस पार जो स्वर्णिम उजाला है,
वह किसी देवता का वरदान नहीं;
वह मनुष्य के ही
रक्त-पसीने से उपजा
सूर्य है।

ये सीढ़ियाँ
किसी मंदिर की नहीं,
ये कर्म-भूमि के सोपान हैं।
हर पग पर
एक नया संकल्प,
हर चढ़ाव पर
एक नई चुनौती।

मैं पूछती हूँ इस मौन से ;
तूने इतने युद्ध देखे,
इतने पतझड़ सहे,
फिर भी अडिग क्यों है?
मेहराब हँसता है

"क्योंकि मैंने जान लिया है
कि झुकना मृत्यु है,
और लड़ना ही जीवन।"

तो आ, राही!
इस दहलीज़ पर
शीश नवाने नहीं,
माथा उठाकर
जीने का मंत्र सीख।
यहाँ प्रकाश भी
संघर्ष से निखरा है,
यहाँ छाया भी
विश्राम नहीं, तैयारी है।

हम मिट्टी के पुतले नहीं,
हम मिट्टी की बारात हैं
जो हर पत्थर को
गीत बना देते हैं,
हर अंधेरे को
प्रभात बना देते हैं।

डॉ. रागिनी स्वर्णकार
'शर्मा'

www.antrashabdshakti.com
संपादक : डॉ. प्रीति समकित सुराना
वारासिवनी (म.प्र.)

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
प्रकाशन एवं बहुद्देशीय संस्था

वेब अंक
शुक्रवार, 3 जुलाई 2026

लघुकथा: तृप्ति का मेघ

जेठ की तपन ने धरती की शिराओं को सुखाकर रख दिया था। खेत-खलिहान दरक चुके थे और बरगद की छांव में बैठे बूढ़े रामदीन की आँखें आसमान के सूनेपन को नापते-नापते थक चुकी थीं। गाँव का पोखर महज़ सूखी मिट्टी का एक गर्त बनकर रह गया था। हर सांस में धूल थी, हर कंठ में प्यास।

तभी, आषाढ़ के अंतिम दिनों में हवा ने करवट ली। पुरवाई अपने साथ सोंधी महक का संदेश लेकर आई। उत्तर-पश्चिम की ओर से कालिदास के 'मेघदूतम्' की भांति श्यामल घटाएं उमड़ने लगीं। गगनमंडल पर बिजलियों का नर्तन शुरू हुआ और देखते ही देखते प्रकृति का स्वर बदल गया।

"झम-झम... रिमझिम..."

पहली बौछार ने जब तप्त वसुधा को छुआ, तो धरती के रोम-रोम से विरह की अग्नि शांत होने लगी। धूल धुली, तो वृक्षों का हरापन गहरे नीलमणि की तरह चमक उठा। मयूर ने अपने पंख पसारकर सदियों पुराना आदिम नृत्य प्रारंभ कर दिया।

रामदीन ने ओसारे से निकलकर आंगन के बीचोबीच कदम रखा। उसने अपनी अंजलि फैलाई और गिरती बूंदों को समेटने लगा। वे बूंदें केवल पानी नहीं थीं; वे किसान के माथे की लकीरों का शमन थीं, वे खेतों में लहलहाने वाले सुनहरे कल का स्वप्न थीं।

"तात! देखो, अंबर ने धरती का आलिंगन कर लिया,"
उसकी नातिन ने खिलखिलाते हुए कहा।

रामदीन ने मुस्कुराकर आकाश की ओर देखा। वर्षा ऋतु केवल ऋतुओं का परिवर्तन नहीं थी, वह तो सृष्टि के पुनर्निर्माण का उत्सव थी। प्रकृति ने अपने आंसुओं से धरती की प्यास बुझाकर उसे पुनः गर्भाधान का वरदान दे दिया था। हर बूंद में जीवन का संगीत था, और उस संगीत में पूरा संसार भीग रहा था।

योगी नारायण नाथ
इटहरी, सुनसरी नेपाल

माँ

तेज धूप मे बदली जैसी मैने माँ को देखा है|
सूखी रोटी में चटनी सी मैने माँ को देखा है||

जब भी थोडा डर जाता था आँचल से ढक लेती थी|
सूनी आँखों मे खुशियों सी मैने माँ को देखा है||

माँ का बन्धन माँ की डांट माँ का वो सब प्यार दुलार|
इक ऊँगली को थाम टहलते मैने माँ को देखा है||

कण्डी, कण्डा, चूल्हा, चौका भड़वा बर्तन तक लहराती|
दिन भर चक्की जैसी पिसती
मैने माँ को देखा है||

सूरज से पहले उठती थी देर रात तक जगती थी|
घर भर के सुख दुख सब सहती मैने माँ को देखा है||

आँखों से ओझल है फिर भी
पल पल रहती साथ मेरे|
जब जब खुशियाँ द्वार पे आती मैने माँ को देखा है||

अनिल कुमार मिश्र 'अनिल'
फतेहपुर-उत्तर प्रदेश

सुकून है उन राहों में

बहुत सुकून है उन राहों में,
जहाँ मतलब के मोड़ नहीं आते,
जहाँ कदम थकते तो हैं मगर,
रिश्ते कभी बोझ नहीं बन पाते।
जहाँ धूप भी छाँव सी लगती,
और छाँव में अपनापन मिलता है,
जहाँ शब्दों से ज्यादा ख़ामोशी,
दिल का हाल कह जाती है।
नहीं होती वहाँ कोई होड़,
न ऊँच-नीच का कोई अंदाज़,
बस साथ चलता है विश्वास,
और मन रहता है बेआवाज़।
वो रास्ते भले ही सुनसान हों,
पर अकेलापन महसूस नहीं होता,
क्योंकि सच्चाई का साथ हो तो,
हर कदम भीड़ जैसा होता।
मतलब की गलियों से दूर कहीं,
एक दुनिया अब भी बसती है,
जहाँ इंसानियत मुस्कुराती है,
और सादगी ही सजती है।
चलो कभी हम भी चलें वहाँ,
जहाँ दिल से दिल मिलते हैं,
जहाँ बिना किसी कारण के,
लोग बस अपने लगते हैं।

डॉ निरुपमा वर्मा.
एटा. उत्तर प्रदेश

गवां कर बैठा हूं

सुख चैन अपना गवां कर बैठा हूं,
रातों की नींद अपनी उड़ा कर बैठा हूं।

कई समय पहले अपने को बनाया था मैंने,
तुम्हारे जाने से अपने को तबाह कर बैठा हूं,

लोग रोकते है मुझे तुम्हारे बारे में सोचने से,
तुम्हारी यादों को ही बस सवार कर बैठा हूं,

बहुत फर्क पड़ता है किसी के न होने से,
तुम्हारे बिना अपने को उजाड़ कर बैठा हूं,

सबसे ज्यादा चाहा था तुझे मैने,
तेरे लिए अपना सब कुछ लुटा कर बैठा हूं,
अब समाज में प्रणव की आबरू क्या है,
तेरे लिए सारे समाज को झुठला कर बैठा हूं।

~ *प्रणव राज, कैमूर,*
बिहार

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

ताकि जंगलों को बचाए रख सकूं

मैंने
एक पेड़ को
हमेशा ही
स्वयं में ज़िंदा रखना चाहा,

जब कभी
समय की धूप
कुछ ज़्यादा तीखी लगी,
उसकी छांव को सोखकर
मैं शीतल हुई,

जब कभी
दरक कर बिखरने लगी
रिश्तों की उपजाऊ मिट्टी,
मैंने
उसकी जड़ों से सीखी
समंजस्यता की भाषा,

जब कभी
मौसमों के विरुद्ध
मैं कई-कई बार
पत्तों की तरह झरकर गिरी,
वह
भीतर ही भीतर
चुपचाप बदलता रहा मुझे
किसी पीले बसंत की तरह,
और,,,
विश्वास की नई कोंपलें फिर से फूटने लगीं,

मैंने देखा है
पेड़ कभी शोर नहीं करते
बस, चुपचाप जंगलों को बचाए रखते हैं
ताकि सभ्यताएं जीवित रह सकें !!

हे ईश्वर
मृत्युपरांत नहीं चाहिए मोक्ष,
मुझे
बना देना एक बीज
ताकि पेड़ों को बचाए रख सकूं,,
जंगलों को बचाए रख सकूं,,
ईश्वर की जगहों को बचाए रख सकूं,,, !!

नमिता गुप्ता "मनसी"
मेरठ

अनुराग!

अनुराग पगे मृदु बातों से,
पल-पल तरसाना ठीक नहीं।
उपवन के कुसमित रागों में,
यूँ नजर चुराना ठीक नहीं।।

कुछ शांत-शांत झीलों जैसा,
मन शांति वरण कर लेता है।
कुछ भाव शून्य शब्दों जैसा,
मन !आचरण कर लेता है।।
यूँ स्वप्न सजे बारातों में,
मन को उलझाना ठीक नहीं।
यूँ नज़र चुराना......!

चाहत की अनुपम क्यारी में,
हिय पुष्प सुगंधित कर देना।।
भोर की नव किरणों के संग
मृदु-भाव अनूठा भर देना।
यूँ आकुल -व्याकुल बातों से,
दिल को भरमाना ठीक नहीं।।
यूँ नजर चुराना ठीक नहीं।।

माधवी उपाध्याय
जमशेदपुर, झारखंड

"तुम क्या हो मेरे लिए"

मत पूछो क्या हो तुम मेरे लिए?

मैं कुछ भी नहीं हूं क्या तेरे लिए ?

तुम सांसे हो मेरे जीवन की,
तुम धड़कन हो मेरे दिल की,
तुम साज हो मेरे हर गीत का,
तुम आवाज़ हो मेरे रोम रोम की।

तुम फूल हो मेरे तन मन का,
तुम आशा हो मेरी मंजिल का,
तुम क्या जानो तुम क्या हो मेरे लिए,
इस लिए मत पूछना कि,

तुम क्या हो मेरे लिए......

जीवन सफर में हम तुम मिले,
हमसफर बन हम तुम साथ चले,
कुछ फूल खिलाए संग उपवन में,
खुशियाँ भरी हमने जीवन में।

कभी न पूछना तुम क्या हो मेरे लिए.......

सुख दुख में हम साथ रहे,
जीवन की शाम है आने को,
फिर भी हम साथ साथ ही हैं,
है वचन हमारा साथ रहें हर जनम में।

कभी न पूछना तुम क्या हो मेरे लिए........।

राकेश
नमित

बरसात

झोली बूँदों से भर गयी होगी,
देख! बारिश से डर गयी होगी।

कल थी क़स्बे में, लोग कहते हैं,
आज फिर से शहर गयी होगी।

धूप दिन भर में थक भी जाती है,
ठंडी छाँव में ठहर गयी होगी।

शहर, क़स्बे व गाँव में भटकी,
थी तो लड़की ही, घर गयी होगी।

जो थी वो झील सूखी, प्यासी-सी,
अब तो पानी से भर गयी होगी।

वो जो तट की उदास किश्ती थी,
हँस के जल में उतर गयी होगी।

गीले कपड़ों से कल का वादा था,
धूप आज फिर मुकर गयी होगी।

झाँककर भोर की खिड़कियों से,
देख बादल सिहर गयी होगी।

ये अचानक-सी बूँद की झड़ियाँ,
धूप कपड़ों से तर गयी होगी।

धूप भी तो हमारी अपनी है,
आँख उसकी भी भर गयी होगी।

कृष्ण भारतीय

वफ़ा

वो ख़ता करके सज़ा को तरसेगा .
रफ़्ता-रफ़्ता वो वफ़ा को तरसेगा ..

इश्क़ का जो रोग उसने पाला है
ज़िन्दगी भर वो दवा को तरसेगा ..

बंद कर के खिड़कियाँ ख़ुश है मगर .
जान लेना वो हवा को तरसेगा ..

शब की तारीकी जो गहरा जाएगी .
वो चराग़ों की ज़िया को तरसेगा ..

दिल का शीशा तोड़ कर चल तो दिया .
उम्र भर मेरी दुआ को तरसेगा ..

बाँटता है जो यहाँ दर्द - ओ-अलम .
देखना वो ही शिफ़ा को तरसेगा ..

आँख का पानी मरा जिस बंदे का
आदमी अब वो हया को तरसेगा ..

आज 'क़ाज़ी' ने बचा ली है अना .
देखना वो अब निदा को तरसेगा ..

डॉ. वासिफ़ काज़ी , इंदौर

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

शेष स्मृतियां

नैना की मम्मी फोन करके बताती है नैना को, तेरे भाई ने घर तुड़वाने का फैसला कर लिया है क्योंकि बच्चों के हिसाब से घर सही नहीं है। पुराना डिजाइन का हो रहा है घर।
अपनी पसंद से बनवाएंगे अब घर तेरे भैया भाभी, अब नए तरीके का। दो-चार दिन में ही काम शुरू हो जाएगा। इतने महीने दो महीने के लिए बराबर में ही किराए का ले लिया है। वहीं से निगरानी कर लिया करेंगे। इतनी बात करकें फोन कट गया। लेकिन नैना कछ बेचैन सी हो गई जैसे कुछ टूट रहा हो। उसके लिए तो घर पहले से ही पराया हो चुका था, पर अब उसको इतना महसूस क्यों हो रहा था?
नैना की तबीयत भी थोड़ी ख़राब सी हो जाती है। रात को निखिल जब उसकी तबीयत का हाल-चाल पूछता है तब नैना सिर्फ अपने मायके जाने की मोहलत मांगती है।
टूटने से पहले अपना पुराना घर एक बार जी भर के देखना चाहती है, जहां उसकी यादों का एक समंदर रह गया था। बाबू जी के साथ की भी तो सारी यादें इसी घर में बंद थी।
अचानक से उसके मायके आते हुए देखा उसके बड़े भैया भाभी को भी सरप्राइज हुआ। नैना टकुर-टुकुर कर घर का एक-एक कोना निहारना चाह रही थी। तभी उसे वह शील्ड दिखाई दीं जो उसने प्रतियोगितों में जीती थी।अब शोकेस से निकलकर स्टोर में कबाड़ में पड़ी थी। क्योंकि शोकेस में तो अब भतीजा-भतीजी ने हीं जगह ले ली थी। नेहा कबाड़ से अपना सामान इकट्ठा करके जल्दी से गाड़ी में रखवा कर ले आती है। आंखो में आंसुओं का सैलाब भर के, दिल को अपने संभाल कर लौट लेती है अपनी ससुराल।
बेटियों का मायका तो छूट जाता है लेकिन उनका प्रेम और मोह हृदय के एक कोने में समा जाता है, शेष स्मृतियां बनकर.......!

रिंकी अग्रवाल 'प्राची
खुर्जा बुलंदशहर उत्तर प्रदेश

आधी रात की बातें और सुबह की मुस्कान

आधी रात तक चलने वाली बातें,
और सुकून भरी गर्माहट से लिपटी रातें।
तुम और मैं, तारों भरे आसमान के नीचे,
हँसते-मुस्कुराते हर पल साथ-साथ।

एक-एक शब्द में अपनी कहानियाँ कहते,
अपनी ही दुनिया बुनते हुए,
इस दुनिया को कुछ देर के लिए भूल जाते।
एक-दूसरे को समझने के लिए
हर संभव कोशिश करते।

चाँदनी रात में बस तुम और मैं,
दूर होकर भी
एक ही आसमान को निहारते हुए।
उस जीवन की बातें करते
जिसकी हमने कभी कल्पना की थी,
और फिर हँस पड़ते
उस पर, जो सचमुच हमारे साथ घटा।

यह सिलसिला आधी रात तक चलता,
फिर अगली सुबह
उसी मुस्कान के साथ
नई रोशनी का स्वागत करते।

जाह्नवी मालेवार

धीरे धीरे

आग पेट की गरम हो रही धीरे धीरे
और बेबसी गरम हो रही धीरे धीरे

बादल सूखा हरा भरा होकर बरसेगा
लहर उफनती गरम हो रही धीरे धीरे

किरणों ने फिर हरी दूब पर जीत लिखी है
बूँद ओस की गरम हो रही धीरे धीरे

नींद पकेगी थकी हुई पलकों में आखिर
माँ की गोदी गरम हो रही धीरे धीरे

लगता है फिर बाबा खाली थैला लाये
आज पतीली गरम हो रही धीरे धीरे

भाव बर्फ थे सहसा बहने लगे पिघलकर
याद किसी की गरम हो रही धीरे धीरे

निशा कोठारी

आवाज़ें

दीवारें नही थी बस शब्दों की
आवाजाही और
उनकी टोह...!!

कदमों की चाल बेख़बर
बस गति नहीं थी...!!
निरंतर गतांक की तरफ
बगैर अवरोधक बढ़ रही थी...!!

नॉन स्टॉप.. ग्रीन सिग्नल
लाल सिग्नल से बेख़ौफ़..!
न चौराहे की चिंता
न भीड़ की घबराहट...!!

बस बढ़ रहे थे कदम
एक अनजान शहर..!!
बोझिल हस्तरेखा की उगती
टूटती ख्वाहिशों सँग...!!

चटकते मटकों सरीखी इच्छाएं
लहूलुहान कदम ठहर गए थे
अचानक एक तंग गली में आकर...!!

गुंजाइशें नही थी आगे बढ़ने की
तबसे अब तक वही खड़ी हूँ
अपनी दहलीज़ को थामे
ताम्र नीलाभ अम्बर
को दरकिनार कर
स्याह रात की चांदनी तले
एक उम्र लेकर....!

जहाँ सिर्फ़ आवाज़ें है
चीखती सर्द रात की सन्नाटो सी...!!
रुकी मंजिलों सँग.....!!

सुरेखा अग्रवाल 'स्वरा

भरोसा

भरोसा है हमें खुद पे
दिलों को जोड़ देंगे हम।

हैं जो दीवार नफ़रत की
उन्हें भी तोड़ देंगे हम।

मुहब्बत से भी बढ़कर तो
जहाँ में कुछ नहीं होता,

जरूरत हो तो अपनी राह
फिर से मोड़ देंगे हम।।

रूपम राज़

www.antrashabdshakti.com

संपादक : डॉ. प्रीति समकित सुराना

वारासिवनी (म.प्र.)

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)

अन्तरा शब्दशक्ति

www.antrashabdshakti.com

प्रकाशन एवं बहुद्देशीय संस्था

वेब अंक

सोमवार, 6 जुलाई 2026

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

सृजक सृजन समीक्षा केंद्रीय रचनाकार विशेषांक

आज अन्तरा शब्दशक्ति के पटल पर सृजक- आ. सुधा शर्मा, राजिम का परिचय एवं सृजन- पाँच रचनाएँ पाठकों की समीक्षा हेतु प्रस्तुत हैं। आप सभी की प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

प्रस्तुतकर्ता: डॉ. प्रीति समकित सुराना अन्तरा शब्दशक्ति

परिचय :

नाम- **सुधा शर्मा**
जन्मतिथि- **29-9-59**
पति- **श्री शरद शर्मा (डायरीकार)**
पिता- **स्व. डॉ. जे. एल. तिवारी**
माता- **स्व. सुमन तिवारी**
लेखन विधा- **कविता, गीत, छंद, मुक्तक, कहानी, खंडकाव्य आदि।**
भाषा- **हिन्दी एवं छत्तीसगढ़ी**

सम्मान :

वर्ड ब्राह्मण फेडरेशन छत्तीसगढ़ द्वारा महिला-शिखर सम्मान- 2026।
रत्नांचल साहित्य परिषद गरियाबंद द्वारा रत्नाँचल रत्न सम्मान 2026।

कवि लोक साहित्य परिषद बिलासपुर द्वारा वर्ष 2023 में 'कवि लोक कृतिकार सम्मान'। मंज़िल ग्रुप साहित्य मंच दिल्ली द्वारा वर्ष 2023 में 'डॉ. सुधा शर्मा दिनकर सम्मान' एवं 'मातोश्री सम्मान'। वर्ष 2022 में 'रमा-भारती स्मृति भूमिजा सम्मान' रायपुर, छत्तीसगढ़। प्रांतीय अखंड ब्राह्मण समाज छत्तीसगढ़ द्वारा वर्ष 2022 में 'शक्तिस्वरूपा सम्मान'। सद्भावना साहित्य संस्थान रायपुर द्वारा वर्ष 2020 में 'सद्भावना नारी शक्ति सम्मान'। वीणापाणि साहित्यिक मंच रायपुर द्वारा वर्ष 2019 में 'वीणापाणि सम्मान'। अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन, वारासिवनी द्वारा वर्ष 2018 में 'वूमन आवाज़ सम्मान'। बेटी बचाओ मंच रायपुर द्वारा वर्ष 2014 में 'कविश्री सम्मान'। न्यू ऋतंभरा साहित्य मंच भिलाई द्वारा वर्ष 2012 में 'तुलसीदास सम्मान एवं साहित्य अलंकरण'। वक्ता मंच रायपुर द्वारा वर्ष 2010 में 'सर्वश्रेष्ठ हिंदी कवि रत्न सम्मान'। भारतीय दलित साहित्य अकादमी रायपुर द्वारा वर्ष 2009 में 'भीम चेतना अवार्ड'। सन् 1985 में आयोजित छत्तीसगढ़ आंचलिक युवा कविता प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार। चेतना साहित्य कला परिषद छत्तीसगढ़, छत्तीसगढ़ शोध संस्थान, छत्तीसगढ़ अस्मिता संघ, छत्तीसगढ़ राजभाषा आयोग, रेलवे भर्ती बोर्ड बिलासपुर एवं विभिन्न संस्थाओं द्वारा समय-समय पर समादृत। साहित्यिक मंचों द्वारा आयोजित ऑनलाइन साहित्यिक प्रतियोगिताओं में शताधिक प्रमाणपत्रों से सम्मानित।

विगत 40 वर्षों से सतत लेखनरत। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी से कविताओं का प्रसारण।

प्रकाशित कृतियाँ :

1. कुंडलिया संग्रह 'कहे सुधा सुन मीत' नोशन प्रेस, चेन्नई।
2. गीत संग्रह 'नदी कूल का है बंजारा' नोशन प्रेस, चेन्नई।
3. दोहा संग्रह 'हृदय रखें नवनीत' शिल्पायन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
4. कहानी संग्रह 'मनठोरा' शिल्पायन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।
5. काव्य संग्रह 'अनंत पथ पर महानदी' अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन, वारासिवनी, बालाघाट।
6. काव्य संग्रह 'सृजन समीक्षा' अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन, वारासिवनी, बालाघाट।
7. खंडकाव्य 'महानदी' पराग प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. खंडकाव्य 'चंदन सुधि पुरवा कर डारेंव' जीविका प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. काव्य संग्रह 'जिनगी के बियारा म' वैभव प्रकाशन, रायपुर।
10. काव्य संग्रह 'पुरवा कहती है' वैभव प्रकाशन, रायपुर।
11. विभिन्न साझा संग्रह में रचनाएँ प्रकाशित।
12. भगवद्गीता दोहानुवाद **प्रकाशनाधीन नोशन प्रेस, चेन्नई।**

स्थायी पता : ब्राह्मण पारा, राजिम, जिला-गरियाबंद, छत्तीसगढ़-493885
ई-मेल :- sudhasharma1909@gmail.com मोबाइल :- 9340919054

1 भ्रूण की याचना

करुणा भरी आवाज़ है, कोई सुनो ये प्रार्थना।
अब भ्रूण है निज प्राण की,
बस माँगता है याचना।
मत घोल माँ तू अब गरल, मृदु तन महा दे यातना।
हूँ अंश तेरा माँ, सुनो, ममता मुझे भी बाँटना।1।

माँ, पीर तेरा बाँट लूँगी काम सारे छाँटकर।
दो जिंदगी साँसें मुझे, यूँ फेंकना मत काटकर।
याचक बनी माँ भीत से, अंतस रहे बस काँपता।
जाने कहाँ, किस मोड़ पर, चाकू मुझे है नापता।2।

याचक खड़ी हूँ मात सीपी, कोख की मोती बनी। नौ मास की रक्षक बनी माँ,
दो नहीं पीड़ा घनी।
रोको नहीं, टोको नहीं, नव सृष्टि के संसार को।
ममता भरो, करुणा करो, सुन बेबसी चीत्कार को।3।

2 कृष्ण

कृष्ण पुकारत आज सभी, प्रभु है विपदा जग आन खड़ी।
मानव मानव बैर रखे, अब मानवता पर धूल पड़ी।
खून बहे दिन रात, रहे नित दानवता सर नाच अड़ी।
मोहन आकर दूर करो सब, दैत्य मिटा हर त्रास बड़ी।1।

प्रेम स्वरूप हुआ अब घायल, शील कराह रही जग में।
है अवगुंठन क्षीण हुआ, अब लाज खड़ी बिकती मग में।
भाव छली बस ज्वार उठा, देह जगी है रग-रग में।
गुंफित है पट द्वार विवेक, बँधे मानव पंकिल पग में।2।

कृष्ण सुना मुरली धुन, प्रीति जगे फिर मानव के मन में।
शूल मिटे सब स्वारथ, मोहन नीति रहे हर जीवन में।
नाम जपे हर साँस मनोहर, मोहत रूप रहे नैनन में।
गीत सुना सुर नेह बहे, बस प्रेम बसे हर दामन में।3।

4 अपनी जीवन धारा मोड़

चलते-चलते थम मत जाना, मंजिल की निज राहें छोड़।
कंटक पथ के दूर करो सब, अपनी जीवन धारा मोड़।

नहीं सुगम है मार्ग बटोही, यात्रा दुर्गम मिले अपार।
पर्वत खाई मय कंटक है, अवरोधक सब रहे हजार।
चलना होगा नित अग्निपथ, भय का दुर्बल कारा तोड़।।
कंटक पथ के दूर करो सब, अपनी जीवन धारा मोड़।1।

लक्ष्यहीन जीवन है कैसा, करता पशुवत जो आचार।
मानव तन है अमोल जग में, ईश्वर का अनुपम उपहार।।
श्रेष्ठ कर्म जग में मत भूलो, परम पिता से नाता जोड़।
कंटक पथ के दूर करो सब, अपनी जीवन धारा मोड़।2।

हो सोनिल इतिहास तुम्हारा, स्वर्णाक्षर में अंकित नाम।
कालजयी बन समर जीत कर, पथ प्रशस्त करना अविराम।
समय कहाँ कब ठहरा बोलो, तूफानों से पल-पल होड़।
कंटक पथ के दूर करो सब, अपनी जीवन धारा मोड़।3।

5 गीत

किस युग से गुजरे हम, कौन राह जानी है।
सब भाग रहे हर पल, मंजिल अनजानी है।

1 पग-पग इस पथ पर तो, बस स्वप्न लुटेरे हैं।
अधरों पर ठहरे स्मित, पर पीर घनेरे हैं।
महज दौड़ में शामिल, मदहोश जवानी है।
सब भाग,...

2 आँखों के समंदर में, आँसू के मोती हैं।
धुँधला-सा चेहरा, आशा की जोती है।
पल-पल पलकित पलकें, बस नजर चुरानी है।
सब भाग,...

3 उमड़ा सैलाब घना, सर्व बहा ले जाए।
कोमल कच्ची कलियाँ, बेमौसम मुरझाएँ।
है रुख बदलती हवा, हर पीर बेमानी है।
सब भाग,...

4 ममता के आँचल में, काँटे उग आते हैं।
वृद्ध पिता-माता को, आश्रम भिजवाते हैं।
हुआ दूध लज्जित बस, माँ पानी-पानी है।
सब भाग,...

5 रिश्तों की गलियों में, स्वारथ के डेरे हैं।
उठे ज्वार-भाटा जो, मौसम के फेरे हैं।
बनते-बिगड़ते यहाँ, पल-पल गुमनामी है।
सब भाग,...

3 किरदार

तुम क्या जानो किरदार क्या होता है?
जो नित्य स्वार्थ में पगा,
स्वहित बदल लेते
रूप अपना!
रिश्तों के तराजू में ढूँढता,
वह वजनदार बाट,
जो झुका सके,
हर पलड़ा
तुम्हारी ओर!!

तुम!!
हाड़-माँस के लिजलिजे
मानव!!
पेट और प्रजनन में,
दिन-रात लीन।
मदहोशी के आलम में जीता।
आदि मानव से बदतर,
आदमखोर!!
रक्त-पिपासु!!

क्या जानो तुम?
क्या है किरदार?
तुम आदर्शों के शाब्दिक!
ढोल पीटने वाले!!
आवरण में छुपा आचरण,
अवसर मिले तो,
चने-सा भून,
खा डालो,
सारा वतन!!
सारी मनुजता!!

अरे! जाओ भी,
मुझे क्या बताओगे,
तुम नग्न इंसान!
अंदर से मात्र खोखले हो तुम!!
सपनों में जीते,
बस और क्या?

हाँ! हाँ!
जानती हूँ,
मुझसे बेहतरीन और कौन जान सकता है तुम्हें?
मैं धरती हूँ!
तुम्हारा रंगमंच!!!
जानती हर अभिनय तुम्हारा,
कहाँ से कहाँ तक निभाते हो किरदार अपना?

भूल गए?
गुरु हूँ!!
सीखो मुझसे,
निःस्वार्थता!!
समरसता!!
त्याग-बलिदान!!
परोपकार और अपने वजूद की मर्यादा!!
क्या ये नहीं तुम्हारा किरदार?

अरे, ओ मानव!!!
मैं तुमसे शोषित होकर भी,
अपना दायित्व नहीं भूली।
और तुम?????
सोचो जरा!!!!!

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

बन जाना मेरे ईश्वर तुम

सुनो ..
मैं एक नरम मुलायम चाक गार हूँ
चाहो जिस रंग रूप में ढाल दो मुझे तुम

संरचना करो मेरी देह में
तो प्रथम दिल को
स्थापित कर लेना तुम

फूंकना उसमें सरस
कामनाओं के उद्घोष को
मेरी रग-रग में याद से
अतिरेक को भी
शामिल कर लेना तुम

मूलाधार चक्र केंद्र में
संगीत के दस थाट को रखना
मेरी नीली नसों में
रागों का समूह
रक्त संचरण करता रहे
यह भी ध्यान में रख लेना तुम

और जब आँखें खोलूं तो
प्रथम तुम्हारा दरस करूं
राग रागिनी छंद अलंकार
सकल सृष्टि नाद में
ऐसे गुंजित कर देना तुम

जब चेतना जागे मेरी तो
मन न उलझे न कहीं
मोह अपभ्रंश पाप पुण्य
व्युत्पत्ति के जाल में
मुझे उबारना हर उलझन से
ऐसी व्यवस्था कर लेना तुम

सुनो जब अपूर्ण संपूर्ण हो जाए
तुम बस मुझसे प्रेम करना
आओ जब भी मिलने तो
श्वेत वेणी हरी चूड़ियां
संग कुछ किताबें भी
प्रिय धर लेना तुम

सुनो यूं उम्मीदें जागी रहे
मनोरथ भी सिद्ध होते रहे
मैं रहूं जन्म जन्मान्तर तुम्हारी
सहर्ष ईश्वर मेरे यूं बन लेना तुम

जीनस कँवर

किरदार

जो ज़रूरी नहीं रोज़ व्यवहार में।
हम निभाया किए अपने किरदार में।

सब वहाँ की फिज़ा में ज़हर बन गए,
जो उड़ाए गए रंग बाजार में।

वो रहेंगे इधर न रहेंगे उधर,
जिनको कश्ती डुबोनी है मझधार में।

अब सलीका,शराफ़त,वफ़ा न हया,
रह गई बस शरारत ही आचार में।

लोग कह न सके,आप कर न सके,
लूट चलती रही राम दरबार में।

है जुबां आपकी, सोच भी आपकी,
चुप्पियाँ ले गई जीत तकरार में।

हाल अपने जताए, सुनाए किसे,
साथ देते नहीं लोग इज़हार में।

नवीन माथुर पंचोली
अमझेरा धार मप्र

एक दुआ लिख दूँ

तेरे सजदे में एक दुआ लिख दूँ |
सोचता हूँ तुझे ख़ुदा लिख दूँ |

नाम तेरे मैं वाकया लिख दूँ |
दास्तानों में कर्बला लिख दूँ |

बंद आँखों से देख लूँ तुझको ,
और फिर तुझको आइना लिख दूँ |

तू मेरे हाथ की लकीरों में ,
तेरी सूरत को मैं हिना लिख दूँ |

हर तरफ है लोबान की ख़ुशबू ,
तुझको उड़ती हुई हवा लिख दूँ |

तू ही कीर्तन में तू नमाज़ों में ,
खल्क़ का तुझको बादशा लिख दूँ |

लिख दूँ तुझको गली बनारस की ,
तू है जीने का फ़लसफ़ा लिख दूँ |

मुझको इतनी सिफ़त दे ग़ज़लों में,
उस ख़ुदा पे हूँ आशना लिख दूँ |

अभिनव अरुण
राणसी

कौन एफआईआर करवाए (हास्य)

न चंदाचोरी हुई न कोई चोर आए।
बार बार धर्म विरोध ब्रिगेड आए।
न जनता न राम करते शिकायत।
फिर कौन एफआईआर करवाए।

शिलापूजन से अब शुरुआत करे।
घर घर से चंदा मांग की बात करे।
कहाँ से कितना आया कहाँ गया।
धरती निगल गई गगन खा गया।

गांव गांव से आई लो ईंट संभाले।
कहाँ कब लगाई उसे ढूंढ निकाले।
कहीं ओर कहीं छोर मिल जाए।
चोर नही तो किसे बकरा बनाए।

चम्पत की सरलता की बात उठे।
यही फॉर्मूला सब पर अप्लाई करे।
सबके पास है खाल एक भेड़ की।
अब क्यों किसी को बेनकाब करे।

चलो अब मामला रफा दफा करे।
संसद में फिर कठोर कानून बने।
जन्मकैद, लटकाने की धारा जुड़े।
फिर जनता सुखद नींद लेने चले।

सुरेश गुप्ता

ग़ज़ल

दिल में न वो जुनून न आँखों में ताब है।
अब उम्र मेरे सामने ही बेनक़ाब है।

उनका मेरे सवाल पर लम्बा जवाब है।
उनको भुला दूँ, जिसका ये लुब्ब-ए-लुबाब है।

उसने मेरे चराग़ को बख़्शी हैं इज़्ज़तें,
जिसके कहे में, सुन रहा हूँ,आफ़ताब है।

जब तुम पड़ोगे इश्क़ में तब जान पाओगे।
दुनिया है गर ख़राब तो कितनी ख़राब है।

दुनिया यक़ीं करे न करे, या हो बेख़बर।
लेकिन ख़ुदा के हाथ में सबका हिसाब है।

साक़ी तेरी निगाह के जलवों के सामने
शर्मिंदा मैकदे की ये सारी शराब है।

दिल को न "राज़" कोई तमन्ना न कुछ उमीद।
मैं ख़ुश उसी में हूँ जो मुझे दस्तियाब है।

राजकुमार राज़

ग़ज़ल

ख़ौफ़ज़दा यूँ न रहूँ, पशेमानी से निकल जाऊँ,
मैं किरदार बन के तेरी कहानी से निकल जाऊँ।

सबसे लड़ जाऊँ मैं इस हक़-ओ-रसूख़ की जंग में,
या उठा सर पे घर, राजधानी से निकल जाऊँ।

छिन जाऊँ मैं तुझसे, जैसे छिने रोज़ी तेरी,
तू बता, कैसे तेरी ज़िंदगानी से निकल जाऊँ।

इम्तिहाँ ले इस दफ़ा कुछ ऐसा कि रहनुमा मेरे,
फ़ना हो जाऊँ या तेरी निगरानी से निकल जाऊँ।

या तू मेरे सितारों की चाल बदल दे अब मौला,
या मैं ख़ुद इस दुनिया-ए-फ़ानी से निकल जाऊँ।

उन निगाहों में धधकता है कोई जंगल, कंवल,
बारिशें बन के क्यों न चश्मे-नूरानी से निकल जाऊँ।

कमलेश कंवल,
उज्जैन

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

पुस्तक समीक्षा

"मतवालों की मधुशाला"

बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रयागराज के लब्धप्रतिष्ठ कवि, साहित्यकार, विचारक एवं समाजसेवी श्री शिवराम उपाध्याय 'मुकुल मतवाला' जी द्वारा विरचित काव्य ग्रन्थ 'मतवालों की मधुशाला' जिसका उप शीर्षक 'आध्यात्मिक रुबाइयाँ' है, एक बहुत ही सरल, सहज और भावपूर्ण ग्रन्थ है। जैसा कि पुस्तक के शीर्षक से ही स्पष्ट है, यह सीधे तौर पर हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कवि 'हरिवंश राय बच्चन' जी की 'मधुशाला' की परम्परा की याद दिलाती है। जहाँ बच्चन जी की 'मधुशाला' जीवन के दर्शन को हाला, प्याला और साक़ी के माध्यम से समझाती है, वहीं इस पुस्तक के उपशीर्षक "आध्यात्मिक रुबाइयाँ" से यह स्पष्ट होता है कि यहाँ कवि ने 'मधुशाला' के प्रतीकों हाला, साक़ी और प्याला का उपयोग विशुद्ध रूप से आध्यात्मिक (Spiritual) और सूफ़ी अन्दाज़ में ईश्वर, प्रेम और मानवता को समझाने के लिए किया है।

पुस्तक का मुखपृष्ठ बहुत ही सुन्दर और आकर्षक है, जिसमें पृष्ठभूमि में उड़ते हुए पक्षी (पंछी) और बादल दिखाई दे रहे हैं। यह आत्मा की आज़ादी और सांसारिक बन्धनों से ऊपर उठने का प्रतीक हो सकता है।

केन्द्रीय चित्र में एक पारम्परिक सुराही (जग) और उसके चारों ओर सजे हुए प्याले (कप) एक थाली में रखे दिखाई दे रहे हैं, जो शीर्षक 'मधुशाला' को जीवन्त करते हैं। नीचे दाँई ओर काव्यकार श्री शिवराम उपाध्याय 'मुकुल मतवाला' जी की बहुत ही सौम्य और जीवन्त तस्वीर है, जो टोपी और चश्मा पहने हुए पारम्परिक भारतीय कवि के रूप में नजर आ रहे हैं।

कवर पेज पर पुस्तक की एक बेहद खूबसूरत रुबाई संख्या २१२ अंकित है, जो निम्नलिखित है –

"आता पंछी फिर-फिर पीने, बची-खुची अपनी हाला,
साक़ी से गर मिल न सका तो, लेकर फिर नूतन प्याला;
मेरे यारों! इस दुनिया में, सब को प्यार किया करना,
जानें किस सूरत में साक़ी, टहल रहा हो मतवाला।"

इस रुबाई से कवि के लेखन की गहराई और उनके सन्देश का पता चलता है।

"आता पंछी फिर-फिर पीने..." पंक्तियाँ जीव (**आत्मा**) के बार-बार संसार में आने और उस परम आनन्द (**हाला अर्थात ईश्वरीय प्रेम**) को पाने की ललक को दर्शाती हैं। इस कविता का सबसे सुन्दर और गहरा सन्देश अन्तिम दो पंक्तियों में है—

"मेरे यारों! इस दुनिया में, सब को प्यार किया करना,
जानें किस सूरत में साक़ी, टहल रहा हो मतवाला।"

यहाँ '**साक़ी**' (शराब परोसने वाला) स्वयं **ईश्वर/परमात्मा** का प्रतीक है। कवि सन्देश दे रहे हैं कि संसार के हर इन्सान में ईश्वर का वास है, इसलिए किसी से नफरत न करें; न जाने किस रूप में भगवान आपके सामने आ जाएँ।

रुबाई छन्द में लिखी गई पुस्तक की भाषा शैली अत्यन्त सरल, सहज, प्रवाह पूर्ण और बोधगम्य है। भाव इतने गम्भीर हैं कि पाठक के मन पर एक गहरी छाप छोड़ जाते हैं।

'मतवालों की मधुशाला' मुख्य रूप से उन पाठकों के लिए एक बेहतरीन रचना है जो रुबाई छन्द, सूफ़ी विचारधारा और आध्यात्मिक कविताओं में रुचि रखते हैं। शिवराम उपाध्याय 'मुकुल मतवाला' जी ने सरल लेकिन गहरे शब्दों के माध्यम से संसार को आपस में प्रेम करने और हर इन्सान में ईश्वर को तलाशने का एक बेहद मानवीय सन्देश दिया है। यह पुस्तक पाठकों को जीवन के एक अलग आध्यात्मिक रस से सराबोर करने की क्षमता रखती है।

काव्यकार :- शिवराम उपाध्याय मुकुल-मतवाला
समीक्षक :- हंसराज हंस

माँ

मैंने कभी ऐसा अंधेरा नहीं देखा
या ऐसी रोशनी को नहीं छुआ
क्योंकि मैं इंसान बनना चाहता हूँ।

छिपे हुए, सख्त अंधेरे के पहरेदार
सूरज को अपनी ओर मोड़कर रखते हैं
और अपने पूरे शरीर पर जानवरों की गंध फैलाते हैं।

उनकी रात की भाषा में,
डर के बर्फीले शब्द।

माँ, तुम
मुझे एक बार, एक बार, एक बार अमृत दो।

मुझे इसे चखने दो और देखो कि इस घने जंगल में
बगीचे की आठों सिद्धियाँ कैसे पैदा होती हैं,
जब मैं इसे खाऊँगा,
तो मैं फिर से समय लूँगा
अपनी माँ के शरीर में लौटने के लिए
अगर मैं एक बार गलती करूँ,
तो मैं सौ बार शुरुआत से शुरू करूँगा।

मैं बार-बार आग खाऊँगा
मैं तब तक मिट्टी लूँगा जब तक
मैं गंदगी को धोता रहूँगा
कितना पानी अंदर डालूँगा।

मैं इस जीवन को रोशनी की आरती समझता हूँ
तुम्हारा आशीर्वाद मौत और पुनर्जन्म की धारा में बहता है
आत्महत्या की पकड़ तोड़कर
मैं उसके खिंचाव से ज़िंदा हूँ
मैं अपने शरीर में अनंत स्वाद जानता हूँ।

अचानक या कभी-कभी, अपनी चेतना में, मुझे
माँ की नाल महसूस होती है
दिवाली की अंतहीन रोशनी से आसमान को रोशन करते हुए
मैं पूरी रात अपने पूरे शरीर पर 'माँ' शब्द लिखता हूँ।

निर्मल राय
विष्णुपुर, वेस्ट बेंगल

"बहुत जरूरी है"

दिलों में बहुत ही दूरी है,
पैसों की मजबूरी है।
पैसा ही होता भगवान,
पैसा बहुत ज़रूरी है।

होती उलझन कपड़ों से भी,
शान दिखाना ज़रूरी है।
कर्ज़ हो सिर पर कितना भी,
शादी में स्टेटस बहुत ज़रूरी है।

होम लोन मिले जैसे-तैसे,
घर अपना बहुत ज़रूरी है।
कार खड़ी हो दरवाज़े पर,
किश्तों में लेना बहुत ज़रूरी है।

घर पर पढ़ना पड़ता फिर भी,
बच्चे का बड़ा स्कूल बहुत ज़रूरी है।
घर में हों नौकर-चाकर,
फिटनेस को जिम भी बहुत ज़रूरी है।

पॉकेट में पैसा एक नहीं,
क्रेडिट कार्ड बहुत ज़रूरी है।
हो आमदनी चवन्नी भर,
खर्च रुपैया बहुत ज़रूरी है।

लिए टेंशन घूमते-फिरते,
आनंद को टूर बहुत ज़रूरी है।
करता नहीं परवाह कोई किसी की,
खुद को खुश दिखाना बहुत ज़रूरी है।

दिलों में बहुत ही दूरी है,
पैसों की मजबूरी है।
पैसा ही होता भगवान,
पैसा बहुत ज़रूरी है।

रिश्तों से बढ़कर धन हो जाये,
कैसी ये लाचारी है।
प्रेम बचाना मत भूलो,
वही सबसे ज्यादा जरूरी है।

स्वरचित एवं मौलिक रचना
सर्वाधिकार सुरक्षित

अजय कुमार शर्मा
कानपुर, उत्तर प्रदेश

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

पुस्तक समीक्षा "गृह_दाह"

"अविश्वास, अहम् और सामाजिक विसंगतियों से गृहस्थी के सुलग कर, नष्ट होने की कथा।"

उपन्यास : शरत् चन्द्र चट्टोपाध्याय (1920)
समीक्षक : मुकेश दुबे, सीहोर, भोपाल (म.प्र.)

शरत् चन्द्र चट्टोपाध्याय, ऐसा नाम जिनकी लेखनी अपने-आप में लेखन कार्य से जुड़े एवं सीखने वालों के लिए एक इदारा है, विद्यालय है। जब भी और जितनी बार पढ़ा जाए, सृजन के सागर से लोटा क्या गागर भरकर लाई जा सकती है।

मैं खुद बहुत पुराना हूँ इसलिये पुरानी चीजों में आसक्ति कम नहीं होती।

पुराने दोस्त, पुराना गीत-संगीत, पुराना साहित्य, पुरानी शराब और प्राचीन परम्पराओं को स्वयं से कभी दूर नहीं कर सका।

ऐसा नहीं है कि नया साहित्य, फिल्म, गीत, संगीत व मान्यताओं का विरोधी हूँ, कदापि नहीं किन्तु इनका असर क्षणिक रहता है। बहुत दूर तक यह यह साथ नहीं चलते। बहुत जल्दी पीछे छूट जाते हैं और आभास तक नहीं होता इनसे दूर हो जाने का।

बचपन में जब मैं जिला पुस्तकालय सीहोर का सदस्य बना था, तभी से शरत् चन्द्र जी के लेखन से जुड़ गया था। कहानी और उपन्यास के प्रति मेरी समझ विकसित करने में शरत् चन्द्र जी का विशिष्ट योगदान है।

पुरातन के स्थायित्व की एक बानगी देखिए -चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' द्वारा लिखित कहानी **'उसने कहा था'**।

अनगिनत प्रेम-कहानियाँ लिखी-पढ़ी गई लेकिन जिस निश्छल प्रेम, कर्तव्य-पालन और बलिदान की अनुभूति लहना और सूबेदारनी के प्रेम में है, दूसरी किसी कहानी में वो महसूस नहीं होता।

"गृहदाह" भी 1920 में लिखा गया था लेकिन उस वक़्त के सामाजिक ताने-बाने, रुढ़ियों और मानवीय संवेदनाओं को विशुद्ध मनोवैज्ञानिक कलेवर मे लपेटकर प्रेम-त्रिकोण के रूप में बुनना अपने-आप में आश्चर्यचकित करने वाला है। तीन पात्र, तीनों के विचारों व सोच में अन्तर फिर भी मित्रता।

महिम और अचला के प्रेम तथा दांपत्य जीवन में महिम का अंतर्मुखी व उदासीन होना, सुरेश के लिए अवसर का कार्य करता है और वो द्वंद, पलायन तथा सामाजिक परिस्थिति निर्मित गलतफहमियों को अपने पक्ष में मोड़कर अचला को अपने प्रभाव में लेने में सफल हो जाता है। यहीं पर उपन्यास का शीर्षक **"गृह-दाह"** सार्थक होकर एक हरी-भरी गृहस्थी को जलाने लगता है। वैवाहिक रिश्ते में तनाव और सामाजिक वर्जनाएँ किस तरह से आग में घी डालने का काम करती हैं, शरत् चन्द्र जी ने बहुत अच्छी तरह से समझाया है। इतना ही नहीं, आपने रुढ़िवादिता, ब्रह्म समाज के विचारों और पुरुष के अहंकार को भी उपेक्षित नहीं रखा है।

वर्तमानकाल में जिस वैवाहिक संस्था का पतन हम देख रहे हैं, लेखक ने उसे **1920** में भांप लिया था और आगाह किया था कि यदि अविश्वास, अहम और सामाजिक विसंगतियों पर नियंत्रण नहीं रखा तो कोई भी गृहस्थी अपना सौंदर्य खोकर समाप्त हो सकती है।

मुझे तो ऐसा लगा, यह उपन्यास आज के समय में और अधिक प्रासंगिक बन पड़ा है।

ऐसे महान रचनाकारों के लेखन पर टीका-टिप्पणी तो औकात से बाहर की चीज है परन्तु इन्हें पढ़कर जब असीम प्रेम की अनुभूति हो तो उसे दोस्तों से साझा करने में संकोच नहीं करना चाहिए, इसलिये अपने विचार यहाँ रख दिए। बहुत आभारी हूँ अमर सत्य प्रकाशन, नई दिल्ली का जिनके माध्यम से यह संग्रहणीय उपन्यास मुझे उपलब्ध हो सका मेरे निवेदन पर।

मुकेश दुबे, सीहोर, भोपाल (म.प्र.)

बिसरी यादें

मुझे ऐसे न तड़पाओ तुम्हारा यार हूं मैं
खुदारा अब तो आ जाओ तुम्हारा यार हूं मैं

मेरे दिल को न रक्खो प्यार से महरूम अपने
मुहब्बत मुझ पे बरसाओ तुम्हारा यार हूं मैं

ग़लत हूं मैं अगर तो फिर ग़लत मुझको कहो तुम
मुझे आईना दिखलाओ तुम्हारा यार हूं मैं

अकेले में यक़ीनन काट देना मेरी बातें
सरे महफ़िल न झुठलाओ तुम्हारा यार हूं मैं

मुहब्बत और इबादत में अगर है फ़र्क़ कोई
मुझे वो फ़र्क़ बतलाओ तुम्हारा यार हूं मैं

बनाओ रक्खे जन्नत ज़िन्दगी मेरी किसी दिन
मेरे पहलू में आ जाओ तुम्हारा यार हूं मैं

तुम्हारा डर तुम्हारी मुश्किलें अब से हैं मेरी
ज़माने से न घबराओ तुम्हारा यार हूं मैं

सोनिया अक्स

ले गया है दिल

ले गया है दिल को मेरे जाने क्यों बच्चा समझ।
खेलता है दिल से मेरे इश्क़ में कच्चा समझ।।

आजमाता है मुझे वो खेलकर दिल से मेरे।
माफ़ कर देती हूँ उसको रोज़ मै सच्चा समझ।।

मात कर देता है मुझको इश्क़ के वो खेल में।
हार जाती हूँ मै बाज़ी उसको जब बच्चा समझ।।

आ ही जाती हूँ मै अक्सर बात में उसकी मधु।
मान लेती हूँ हमेशा बातों को अच्छा समझ।।

मधुरी मिश्रा
वाराणसी

अब सब ठीक है माँ !

दर्द भी नहीं है
ज़ख्म भी नहीं
और दु:ख भी नहीं कि
मेरी बाहें, मेरी कमर, मेरी गर्दन
सब तोड़ दी गई
लगातार पाँच दिनों तक
बत्तीस लोगों ने
मेरे जिस्म को
बहशी जानवर की तरह नोंचा

बहुत चीखी थी उस वक़्त
चिल्लाई थी इतनी कि पसीज जाये पत्थर का सीना भी
लेकिन नहीं पिघला था वो

किसी ने नहीं सुनी मेरी पुकार
उसने भी नहीं
जिसने अपनी मुँहबोली बहन की इज़्ज़त बचाने
नंगे पांव दौड़ लगा दी थी

माँ!
मैं द्रौपदी नहीं थी न !

तुम उदास मत होना माँ !
यहाँ कोई भय नहीं है
देवताओं की नगरी है यह
धरती नहीं
इसलिये धरती वाले गुनाह भी नहीं होते

बस एक विनती है माँ!
आगे जब भी जनना
बेटा ही जनना
बेटी जनोगी तो उसे भी नुचवाने होंगे जिस्म
कटवाने होंगे हाथ-पाँव
गर्म पिघलता लोहा पेवस्त करवाने होंगे अपने भीतर

माँ!
सच बताऊँ!
बहुत दर्द हुआ था मुझे
आत्मा तक चीत्कार उठी थी
लहूलुहान हो गया था सबकुछ
एकदम नाजुक थी न मैं
सिर्फ तेरह वर्ष की ही तो थी

लेकिन,
अब सब ठीक है
सब ठीक है माँ!😢

ब्रह्मदेव बन्धु

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

ग़ज़ल

चाह होती पूर्णता की, पूर्ण पर होता नहीं,
चाह जगती शून्य की भी, पूर्ण पर खोता नहीं,

चाह मन की पूर्ण हो हर, चाहते हैं सब यहाँ,
पर कमर कस कर किसी ने, खेत निज जोता नहीं,

जानते सब क्या सहन कर, बीज बनता वृक्ष है,
पर अहं को छोड़ कोई, बीज निज बोता नहीं,

आस करते बैठ तट पर, ढेर मोती के मिले,
साहसी बन पर लगाते, सिन्धु में गोता नहीं,

शांति ही है नाम दूजा, छोड़ने का सब पवन,
कौन पर बोझिल पुराने, बोझ को ढोता नहीं।

डॉ. पवन कुमार पाण्डे
निजामाबाद तेलंगाना

नदी के भीतर

खुद को भरते-भरते
मटका जान लेता था
जल-प्रवाह की दिशा
और उसे
लगता कि
नदी के भीतर ही
कोई पंखा चलता है
जो पर्दे की तरह
हिला रहा है
ऊपर के जल को।

रोहित कुमार
वाराणसी,उत्तर प्रदेश

भूल या अपराध

हो जालसाज़ी या फरेब
हो लूटपाट या सकैम
हो चोरी पैसे, सोने, चांदी, वी आई पी,
वी वी आई पी, बड़े बड़े मंत्री,
उद्योगपतियों बनाम दर्शन सुलभता
बड़े बड़े नामी मंदिरों की
हो घूसखोरी , मिलीभगत, लेनदेन,
सिस्टम की लाचारी जिससे लग जाती
आग कभी होटलों , गेस्टहाउस, बिल्डिंग में
या डह जाते पुल, फ्लाइओवर, घर, सोसाइटी
पड़ जाते बड़े बड़े गड्ढे, आ जाती
दरारें सड़कों पर
या फिर अपहरण, फिरौती, मर्डर,
रेप, गैंगरैप, लूटपाट, उत्पात
ये सब होता नेता, संतरी, बाहुबलियों
की नाक के नीचे
उड़ाती धज्जियां नियम, व्यवस्था व कानून की
ये सब क्या सिर्फ एक भूल है
या घोर अपराध, धोखा, साजिश
लाखों करोड़ों लोगों की आस्था, विश्वास,
सहनशीलता के साथ
पर होने लगे अब ये मंजर आम
बस होता होहल्ला कुछ दिन का
बन सुर्खियां, कुछ निलंबन,
कुछ गिरफ्तारीयां, बयानबाज़ी,
दोषारोपण.... सब खेल सा बनाम एक भूल
जिसका न कोई तोड़ है मासूम लोगों के पास
सिर्फ दर्द, बेबसी, आँसू के सिवा
न कोई पछतावा, खेद, पश्चाताप,
सुधार इन कर्मों को अंजाम देने वालों को
बस रह जाता सवाल यही
ये एक भूल या अपराध ऐसे जिनकी
कोई माफी नहीं पर कोई क्या ही करे??

मीनाक्षी सुकुमारन,
नोएडा

नूर की ही रौशनी

जो जगमग मेरी दुनिया दिख रही है,
तुम्हारे नूर की ही रौशनी है।

भला दिखने की ये जद्दोजहद क्यों,
भलाई या बुराई कब छुपी है।

जो बदले पैंतरा हर इक कदम पर,
उसी का नाम प्यारे जिन्दगी है।

शिकायत इनसे उनसे क्यों ये मेरी,
कहो मुझसे अगर सच में कमी है।

ये जख्मों को कुरेदेंगे ही अक्सर,
अजीजों की यही चारागरी है।

मिला जो वक्त वो उपयोग कर लो,
खबर कल की न कोई आज की है।

समीर द्विवेदी 'नितान्त'
कन्नौज,
उत्तर प्रदेश

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

छतरी मेरी प्यारी छतरी

छतरी मेरी प्यारी छतरी,
बारिश में मतवाली छतरी।

टप-टप बूँदें इस पर गिरतीं,
छम-छम करके नीचे झरतीं।

पेड़ नहाएँ, पत्ते चमकें,
पंछी डाल-डाल पर चहकें।

बादल गरजें, बिजली चमके,
मेरी छतरी तनकर दमके।

आओ बच्चों! बाहर जाएँ,
छतरी लेकर घूमकर आएँ।

बारिश गाए रिमझिम-रिमझिम,
हम भी गाएँ छम-छम, छम-छम।

डॉ. प्रीति समकित सुराना

अंतिम गंतव्य

साँसों को तुम पकड़ लो, ऐसा तो होता नहीं,
ज़िंदगी कब साथ छोड़ दे, क्या पता।

कौन-सी मुलाकात आख़िरी हो, क्या पता,
जीवन का अजीब पहलू, समय की वेदना।

तक़दीर का खेल, कोई पहले, कोई बाद में,
समय का पहिया चलता है, चलता रहेगा।

साँसें कब बिक जाएँ मौत के बाज़ार में,
दर्द बनकर कब बहें आँसुओं की धार में।

हम-तुम सभी खड़े हैं एक कतार में,
खाली हाथों का स्पर्श, एक गहरी शांत नींद।

उम्मीदों को छोड़ कब मौन सहमति खड़ी हो,
धुँधली साँसें कहाँ आसमान खोज रही।

आख़िरी एकांत कौन-सा, क्या पता,
अनसुनी सिसकी, सूखे होंठ, क्या पता।

थपकियाँ अविरल-सी जीवन की,
अंतिम गंतव्य यही, प्राणधारा यही।

कविता नामदेव
नजीबाबाद, बिजनौर
उत्तर प्रदेश

बच्चों तुमको राज बता दूँ (बालगीत)

बहुत दिनों से पूछ रहे हो,
बच्चों, तुमको आज बता दूँ।

सही समय पर उठता हूँ मैं,
सही समय पर सो जाता हूँ।
सारे काम समय पर करता,
फिर सपनो में खो जाता हूँ।

कम खाता हूँ सदा भूख से,
जीने का अंदाज़ बता दूँ।

ज्ञान,ध्यान, विज्ञान धर्म की,
नई-नई पुस्तक पढ़ता हूँ।
सीढ़ी दर सीढ़ी अनुभव की,
धीरे-धीरे मैं चढ़ता हूँ।

बूढ़ा नहीं हुआ हूँ बच्चों,
मैं जवान हूँ राज बता दूँ।

नज़रंदाज़ उमर को करना,
नया सीखना चाह रही है।
ऊबड़ खाबड़ जीवन पथ की,
सीधी सादी राह रही है।

दादा हूँ मैं तुम पूछो तो,
पँख और परवाज़ बता दूँ।

मनोज जैन

सरहदें

रात दिन थरथराती रही सरहदें।
नींद सबकी उड़ाती रही सरहदें।

आदमी-आदमी को लड़ा सामने,
ख़ूब हँसती- हँसाती रही सरहदें।

धर्म, जाति, ज़ुबाँ ,रंग के नाम पर,ये
रोज़ बंटती - बंटाती रही सरहदें।

तार, काँटे,सलाखों से बनकर कहीं,
रास्ते सब मिटाती रही सरहदें।

रोज़ ऊँची हुई और गहरी हुई,
ख़ून जितना बहाती रही सरहदें।

गन गरजती रही,बम उगलती रही,
इस तरह ज़ुल्म ढाती रही सरहदें।

रोहित कुमार
वाराणसी,उत्तर प्रदेश

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

सृजक-सृजन समीक्षा रविवारिय केंद्रीय रचनाकार विशेषांक

आज अन्तरा शब्दशक्ति के पटल पर आ. सोनम लड़ीवाला, जयपुर (राजस्थान) का परिचय एवं उनकी पाँच रचनाएँ पाठकों की समीक्षा एवं विचारार्थ प्रस्तुत हैं।

सरल, सहज और भावप्रधान भाषा में लिखी गई इन रचनाओं में पारिवारिक संस्कार, बदलते सामाजिक मूल्य, तकनीक का प्रभाव, रिश्तों की गरमाहट, जीवन-दर्शन तथा सकारात्मक सोच का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है।

आप सभी सुधी पाठकों एवं साहित्यकारों से विनम्र अनुरोध है कि रचनाओं का गंभीरतापूर्वक अध्ययन कर अपनी निष्पक्ष, सारगर्भित एवं रचनात्मक समीक्षा अवश्य प्रदान करें। आपके सुझाव और मार्गदर्शन किसी भी रचनाकार के सृजन-पथ को नई दिशा और ऊर्जा प्रदान करते हैं।

प्रस्तुतकर्ता:- डॉ. प्रीति समकित सुराना, संस्थापक एवं संपादक, अन्तरा शब्दशक्ति

रचनाकार का आत्मकथ्य

नमस्कार दोस्तों। *मैं सोनम लड़ीवाला, जयपुर (राजस्थान) से हूँ। लेखन मेरा शौक है। मैंने अपनी पहली रचना बारहवीं कक्षा में लिखी थी। अपने पिता-तुल्य डायरेक्टर सर के प्रोत्साहन से लेखन का यह क्रम निरंतर आगे बढ़ता गया।*

लॉकडाउन के समय मैं अन्तरा शब्दशक्ति परिवार से पूर्ण रूप से जुड़ी। यहाँ आकर काव्य लेखन के साथ-साथ अन्य विधाओं में भी लिखना सीखा। एक ही विषय को अलग-अलग भावों में व्यक्त करना तथा एक ही चित्र को अनेक दृष्टिकोणों से देखना सीखा। इस मंच से जुड़ने के बाद मेरे लेखन ने नई गति प्राप्त की और मेरा शौक धीरे-धीरे मेरी आदत बन गया।

उपलब्धियों की दृष्टि से मेरे पास बहुत कुछ कहने को नहीं है। विभिन्न साहित्यिक मंचों द्वारा आयोजित साप्ताहिक प्रतियोगिताओं में कुछ सम्मान एवं उपाधियाँ प्राप्त हुई हैं। मेरी पुस्तक 'भावनाएँ' का प्रकाशन अन्तरा शब्दशक्ति परिवार द्वारा हुआ। साथ ही संस्था की त्रैमासिक पत्रिका 'अन्तरीप' में मेरी पाँच रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

आज मैं अपनी कुछ रचनाएँ आप सभी के समक्ष प्रस्तुत कर रही हूँ। मेरा प्रयास रहता है कि मेरी भाषा सरल, सहज और आमजन के लिए सुगम हो, ताकि मेरे भाव बिना किसी जटिलता के सीधे पाठकों तक पहुँच सकें। आप सभी के स्नेह, मार्गदर्शन एवं रचनात्मक सुझावों की सदैव अपेक्षा रहेगी।

रचनाएँ

1. माँ की सोच

याद है मुझे,
न जाने क्यों,
किसी अतिथि के
आने की आहट से
घर में अफरा-तफरी
मच जाती थी।

चादर की सलवट से लेकर,
परदे की मुड़ी किनार तक
सब दिख जाती थी।
अलमारी पर जमी धूल
भी नज़र आ जाती थी।

मच जाती थी फिर अफरा-तफरी,
सब कुछ करीने से दिखाने की।
पर अब देर ही कितनी बची
मेहमान के आने में।

तभी माँ की कही
वह बात याद आती है—

"दर्पण है घर आपका,
जो आपकी परवरिश का
चेहरा दिखाता है।"

अब समझी हूँ मैं कि
माँ की हर शिक्षा
जीने का सलीका सिखाती है।
खुद के रहते ही
अपने बाद के लिए
स्वावलंबी होना सिखाती है।

2. मोबाइल बना व्यसन

तकनीक तो अच्छी थी,
सोच भी नेक थी।
कभी भी, कहीं भी
अपने से बातें कर सकें—
शायद यहीं
सबसे बड़ी मिस्टेक थी।

आज देखो,
यह उन्नत सोच
क्या गज़ब ढा रही है।

सड़कों पर
वाहन चलाते-चलाते बातें,
दुर्घटनाएँ करवा रही हैं।

और गज़ब तब हुआ,
जब मोबाइल से इंटरनेट जुड़ा।
जो मूल मकसद था,
वह कहीं खो गया।

अब दुनिया
खुद में सिमटती जा रही है।
मिलना-मिलाना बंद हुआ,
वीडियो कॉल पर
औपचारिकता निभाई जा रही है।

छुट्टियों में
नानी के घर जाने को
माँ बच्चों को बुला रही है,
पर बच्चे मोबाइल में डूबे हैं,
माँ की आवाज़
सुनाई ही नहीं दे रही।

उन्नत तकनीक हमारी, देखो,
हमको अधम की ओर ले जा रही है।
अंधा, गूँगा, बहरा बनाकर,
अपनी उँगलियों पर
हमको नचा रही है।

3. रिश्ते और त्योहार

आशीष बदला तोहफ़े में,
तोहफ़ा बदला रुपयों में।
भावनाएँ अब रहीं नहीं,
औपचारिकता ही रह गई।

एक समय था,
रक्षाबंधन का
साल भर इंतज़ार किया जाता था।
बहन-भाई के मिलने पर
घर जन्नत-सा बन जाता था।

नोंक-झोंक और ठहाकों से
पूरा घर भर जाता था।
एक-दूजे के साथ
दिन एक पल में कट जाता था।

अब राखी पहुँचती है कुरियर से,
वीडियो कॉल पर पर्व मनते हैं।
प्यार कैसे बना रहे,
जब सालों तक मिलते ही नहीं?

प्रगति अपनी जगह है,
पर रिश्तों को भी खाद दो।
यों ही नहीं मिल सकते,
तो त्योहारों को सम्मान दो।

यही तो बनते हैं
वे जरिये
अपनों से मिल पाने के।
इन्हें भी बहानों में
व्यर्थ न जाने दो।

काम करते-करते
जब थक जाओगे,
शरीर साथ न दे पाएगा।
कोई पास न होगा तुम्हारे,
तब अकेला पैसा
क्या कर पाएगा?

4. दिल तो बच्चा है जी

तितलियों को देख
आज भी
खुशी से खिलखिलाता है।

उन्हें पकड़ने को
दिल सरपट दौड़ जाता है।

बारिश की पड़ते ही फुहार,
मन भीगने भाग जाता है।

दिल तो बच्चा है जी,
इतने में कहाँ हार मानता है।

आज भी
चाट का ठेला देखकर
पाँव उसी ओर बढ़ जाता है।

गुड़िया के बाल,
बर्फ का गोला
आज भी पास बुलाता है।

उम्र से क्या लेना-देना?
दिल तो बच्चा है जी,
इतने में कहाँ हार मानता है।

मत मानना हार उम्र से,
बन जाना
फिर एक बार बच्चा।

बीता वक्त
लौटकर नहीं आता,
न बचपन का
वह सुखद एहसास।

5. इंतज़ाम

गर भेजा है ईश्वर ने
संसार में जीवन जीने को,
कर रखा है इंतज़ाम उसने
जन्म, मरण और परिणय का भी।

बेटी के पिता को
चिंता रहती है
उसकी विदाई की।

किसान को
सताती है चिंता
फसल की सिंचाई की।

बेटी के भाग का
देगा ईश्वर,
किसी न किसी को
जरिया बनाकर।

मिल जाएगा किसान को पानी,
चाहे वर्षा से,
नदी से
या दरिया से।

कर्म तुझे करना होगा
फल प्राप्त करने हेतु।

फिर सब प्रबंध
वह स्वयं करेगा,
क्योंकि
वह सिर्फ पिता नहीं,
पालनहार है।

सोनम लड़ीवाला
जयपुर (राजस्थान)

रचनाकार का परिचय

नाम :	सोनम लड़ीवाला
जन्मतिथि :	06/12/1988
माता-पिता :	श्री राम शरण लड़ीवाला एवं श्रीमती सरला लड़ीवाला
शिक्षा :	स्नातकोत्तर (अंग्रेज़ी)
लेखन-विधा :	स्वतंत्र लेखन
भाषाएँ :	हिन्दी एवं अंग्रेज़ी

प्रकाशित कृतियाँ :

* भावनाएँ (काव्य-संग्रह)
* भावनाएँ – भाग 2 (कहानी-संग्रह)

सम्मान :

* साहित्य कृति सम्मान (अन्तरा शब्दशक्ति)
* साहित्य क्रांति सम्मान (अन्तरा शब्दशक्ति)
* विभिन्न ऑनलाइन साहित्यिक प्रतियोगिताओं में प्राप्त सम्मान एवं उपाधियाँ

स्थायी पता :
श्री राम शरण लड़ीवाला
लड़ीवालों की बगीची, आगरा रोड,
घाटगेट, जयपुर (राजस्थान)

ई-मेल
ladiwalasonu@gmail.com

मोबाइल
9509275294

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

रिमझिम सावन

हरी छतरी

हरी भरी ओढ़े चुनरिया
फूल पत्ति झूमें लहराये
रिमझिम आई बदरिया
नाचे मन गाए सखिया ||

कारे कारे बदरा छाये
अंबर भी गरजे बरखा
इन्द्धनुषी सप्त रंग घटा
घरती अंबर लागे प्यारा ||

हरियाली लागे रमणीयता
मोर नाचे पपीहा गीत गाता
चारों तरफ हरी पत्ती छतरी
सावन की फुहार आई||

डाली डाली रास रचाते
हिल मिला गले पत्ते मिलते
राग गीत नया गुनगुनाते
लो सावन आया झूमके||

सब आये पर ना आये बलमा
राह निहारू गली गली आंगन
तुम बिन बीत ना जाए सावन
आ जाओं ना तरसाओ मन ||

ऊषा नौगरहिया
कटनी

रिश्तों की कसौटी

कभी-कभी दिल के कुछ एहसास
परखे जाते रिश्तों की कसौटी पर

कितना भी कुछ कर लो कुछ रिश्ते
खरे नही उतरते एतबार की कसौटी पर

सब अपने को सही मानते ना दूजे की सुनते
"मैं सही तुम गलत"उलझ गए इस कसौटी पर

कभी-कभी बुरे वक्त में जो अपने होते
खरे नही उतरते,अपनेपन की कसौटी पर

कभी-कभी बुरे वक्त में अनजाने भी
दे जाते प्यारा एहसास,सांत्वना की कसौटी पर

ऐ दिल किसी से ज्यादा उम्मीदें मत करना
आज रिश्ता निभाया जाता मतलब की कसौटी पर,..।

नीतू रवि गर्ग
चरथावल,
मुजफ्फरनगर,
उत्तरप्रदेश

लेखक की कला का सच...

रोज़मर्रा की ज़िंदगी में,
सुबह उठते हुए,
घर के कामों की व्यस्तता में,
ऑफिस आते-जाते हुए,
सोते-जागते,
इधर-उधर घूमते हुए—
मन भीतर ही भीतर
शब्दों का ताना-बाना बुनता रहता है।

दिमाग में उठती हलचल को
कविता की माला बनाकर
कागज़ पर उकेरने का प्रयास चलता रहता है।
लिखे हुए कई शब्द कटते हैं,
कई बार फिर से लिखे जाते हैं,
जब तक कि
भावों को सही अर्थ न मिल जाए।
आसान नहीं होता,
सचमुच एक लेखक का सफ़र।

सोचता है वह
बिखरे शब्दों को पिरोने की,
अतुकांत में तुक का सौंदर्य खोजने की,
अर्थों को और सँवारने की।
एक-एक वर्ण को
शब्दों में सजोता है,
शब्दों को रचना में पिरोता है।
जब तक अवसर नहीं मिलता
अपनी रचना को पाठकों तक पहुँचाने का,
तब तक वह निरंतर प्रयासरत रहकर
अपनी लेखनी को माँजता रहता है।
आसान नहीं होता,
सच एक लेखक का सफ़र।

कभी बिखर जाता है,
कभी टूट जाता है,
कभी परेशान भी हो जाता है।
फिर भी
मन में शब्दों का नया अंबार लिए
वह पुनः उठ खड़ा होता है।
उन्हें तराशता है,
गढ़ता है,
लेखनी से सुसज्जित करता है।
हर साँस के साथ
उसके मन में
शब्दकोश घूमता रहता है।

आसान नहीं होता,
सच एक लेखक का सफ़र।
फिर एक दिन ऐसा भी आता है,
जब वह निरंतर सृजन करते-करते
अपनी रचना को पूर्ण करता है।

कागज़ पर उतरते शब्दों के साथ
उसका मन प्रफुल्लित हो उठता है।
जब उसकी कला को
सम्मान और स्वीकार्यता मिलती है,
तब लगता है—
उसका लेखन सार्थक हुआ।
आसान नहीं होता,
सच एक लेखक का सफ़र।

आसान नहीं होता
किसी भी रचना को लिखना।
शब्दों को
भावों की सुसज्जित माला में
पिरोना,
और पाठकों के हृदय में
अपना स्थान बनाना।
सच,
आसान नहीं होता
एक लेखक का सफ़र।

जीवन के सत्य की तरह ही
एक लेखक की कला का भी
अपना वास्तविक सच होता है।
काम की व्यस्तता के बीच भी
शब्दों में सामंजस्य बिठाते हुए,
जन-जन के भावों को
अपनी लेखनी में ढालना—
सचमुच आसान नहीं होता,
एक लेखक का सफ़र।

विशाखा सिंघल

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

ग़ज़ल

कानाफूसी कर बतियाना भूल गये
बिना बात की बात बनाना भूल गये

अब तो सीधी सच्ची बातें आती हैं
झूठी - सच्ची बात बनाना भूल गये

जबसे हमने छोड़ा यारो मथुरा को
हम मथुरा ही आना जाना भूल गये

अपना घर अपनी घरवाली याद रही
किसका क्या है ठौर ठिकाना भूल गये

सोचा उनसे दुख अपना साझा कर लें
मिलकर अपना दर्द बताना भूल गये

अनजाने में जब उनसे सर टकराया
सर से हम, सर को टकराना भूल गये

यारों के हम सौ नखरे सहते आये
दुश्मन को हम दोस्त बनाना भूल गये

क्या बतलाये 'रवि' अब अपने बारे में
अपना भी था एक जमाना भूल गये

रवि खण्डेलवाल

मां- बाबा का नाम

तख्ती पर इक नाम लिखा है पहले से,
सबका अपना बाम लिखा है पहले से।

जबरन कैसे उससे कुछ भी बुलवाएं,
जिसकी ज़ुबां पे राम लिखा है पहले से।

मां- बाबा का नाम है कुछ पावन ऐसा,
जिस पर चारों धाम लिखा है पहले से।

आएं हैं पर इक दिन वापस जाना है,
जीवन का अंजाम लिखा है पहले से।

कैसे पानी समझ के उसको पी लें, जब,
हर प्याले पर जाम लिखा है पहले से।

खालो,पीलो,मौज़ करो जय ग़ज़ल कहो,
किस्मत में आराम लिखा है पहले से।

जयकृष्ण चांडक 'जय'
हरदा,म. प्र.

कविता

जीवन सिखाता है-
हर सुंदर चीज़
हमेशा नहीं रहती,
पर जो प्रेम से छू ली
जाए,
वह स्मृति बनकर
अमर हो जाती है।

इसलिए मैं
सूखे हुए फूल भी
संभालकर रखता हूँ,

क्योंकि वे हर बार
यही कहते हैं-
सुंदरता का अंत
हो सकता है,
पर प्रेम और स्मृतियों
का नहीं।

राहुल आर्यन

पारिजात

रजनी की गोदी में जो चुपके से मुस्काता है,
भोर की पहली किरण संग धरती पर आ जाता है।

रात के सन्नाटे में जो चुपके से मुस्काता है,
धरती के आँचल में अपना सर्वस्व लुटाता है।

देवलोक का आशीष है, या कोई शांत तपस्वी है,
कोई और नहीं, वो पारिजात कहलाता है।

शारदीय रातों की शीतल ठंडी बयार में,
इसकी खुशबू घुल जाती है हर द्वार में।

श्वेत पंखुड़ियाँ और केसरिया सी वो डंडी,
जैसे कोई सुहागन सजी हो श्रृंगार में।

मंदिर की आरती बन श्रद्धा में ढल जाता,
भक्तों के मन का कोमल प्रणय बन जाता।

मंदिर की आरती बनकर श्रद्धा में ढल जाता,
भक्तों के कोमल मन का मौन प्रणय बन जाता।

मौन रहकर हमें महकना, सिखाता है
पारिजात का हर फूल एक संदेश सुनाता है।

प्रवीणा सिंह राणा
"प्रदन्या"

रोज देखती आईना

एक स्त्री होने के नाते कई बार
आईना अपना रोज ही देखा है
भागमभाग भरी इस ज़िंदगी में
खूब मुस्कुराता अपना चेहरा देखा है,....

सुबह से शुरु हुई तो घिरनी से
घड़ी की सुइयों से दौड़ते देखा है
एक कप चाय में शुरुआत सुबह की
मुस्कुरा के फिर अपना किचन देखा है,.....

रोजमर्रा की कैलकुलेशन की सोच
रोटियों को तवे पर सेंकते देखा है
जल्दी -जल्दी में सुइयों पर नज़रे टिके
हँसते हुए सुबह को यूँ जाते देखा है,.....

दिनभर की आपाधापी में बस काम
काम में व्यस्त और समय जाते देखा
सांझ हुई मन की ख़ुशी चहकने की
अधरों पर मुस्कान सांझ घर को देखा है,.....

अच्छा लगता है जिंदगी के साथ बढ़ना
हर दिन का कमाल और खुद को देखा है
थकान का पता नहीं ज़िम्मेदारी मुस्कुराती
एक स्त्री होना भी गर्व ये आईना देखा है,.....

कि नंदिता खूब खिलखिलाती है..
कविताओं संग झूम जाती है...
स्त्री है वो आईना...
जहाँ हर दिन चमक जाती है..!!

नंदिता तनुजा

मुसाफ़िर

वक़्त बूढ़ा शाख़ से झर जाएगा।
ये मुसाफ़िर एक दिन घर जाएगा।

हाथ में अपने ही मुस्तक़बिल समझ।
कर्म गर अच्छे रहे, तर जाएगा।

कारनामे ऐसे हैं इस शख़्स के।
देखना इक रोज़ अंदर जाएगा।

बात कुछ तो है तेरे क़िरदार में।
ज़िंदगी में कुछ न कुछ कर जाएगा।

एक दिन रोयेगा वो भी देखना।
एक दिन उसका घड़ा भर जाएगा।

दुश्मनों की लिस्ट में अव्वल हूं मैं।
जब भी जायेगा, मेरा सर जाएगा।

परवरिश इसकी भले कैसी भी हो।
मेरा बेटा है, मुझी पर जाएगा।

नाम हिंदुस्तान है इस मुल्क़ का।
कैसे सोचा आपने, डर जाएगा।

प्यार मर जायेगा दिल का जिस घड़ी।
उस घड़ी " कमलेश" भी मर जाएगा।

कमलेश श्रीवास्तव

घनघोर-घटा

घनघोर-घटा छाई,
जब बादल हुए उदास,
बिजली भी कौंध आई,
बादलों के बीच आज!

न जाने कितने दर्द छिपे,
निकले उमड़ घुमड़ बादलों के साथ,
हुई बारिश बूँद बन गिरे आँसू,
धारा पर फिर बन बरसात!

मिलन हुआ धरा से जब बूँदों का,
अंकुर फूटा बना पौधा,
सूखी धरा पल्लवित हुई फिर,
छाई हरियाली खुशियों के साथ!

घनघोर घटाएँ छाईं,
जब इंद्रधनुषी रंगों के साथ,
आसमान पर खुशियाँ छाईं,
रंगों की बौछारों साथ!

कहीं मोर नाच उठे,
रिमझिम बरसातों में,
कहीं किसान ख़ुशी से झूमें,
रिमझिम बरसातों में!

अदिति रुसिया, वारासिवनी

हादसा

ये हादसों की दुनिया है,
न जाने कब, किस पल,
कौन-सा हादसा हो जाए?

कंधे पर किताबों का बोझ लादे,
सफ़र पर निकलती मुनिया
कब, कहाँ, किस पल ठहर जाए,
कोई नहीं जानता।

कौन-सा हादसा निगल ले
मासूम खिलखिलाहटें,
उम्मीद भरी चाहतें।

कब कोई भेड़िया,
कहानियों से निकल,
छीन ले उसकी
रंगों, किताबों और सपनों की दुनिया।

जब गुम हो जाते हैं वे सपने,
शून्य में विलीन हो जाते हैं सारे अपने,
तब बस शेष रह जाती हैं
चीखें।

चीखें— जिन्हें कोई नहीं सुनता,
चीखें— जो गुम हो जाती हैं
राख के समंदर में।

एक गहरा सन्नाटा पसर जाता है,
हवाओं में मौन सिमट आता है।

ज़िंदगी में दूर तक सालता है
कोई हादसा।

पद्मा मिश्रा

www.antrashabdshakti.com
संपादक : डॉ. प्रीति समकित सुराना
वारासिवनी (म.प्र.)

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
प्रकाशन एवं बहुद्देशीय संस्था

वेब अंक
गुरुवार, 16 जुलाई 2026

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

तपिश

छह बज गए
शाम ने घंटी बजाई
अपने आने की

शाम आ गयी
चिडियों ने भी बता दिया
डालियों पर लौटकर

पर धूप की जिजीविषा
ठण्डी नहीं हुई
कितने ही मग
छिड़क दिये सड़क पर

तप रही है अब भी
जैसे धीमी आंच पर
खिचड़ी उबलती है
भीतर तक तपिश लिये हुए।

रोहित कुमार
वाराणसी,
उत्तर प्रदेश

रंग बदलती दुनिया में, मैं बैरंग ही अच्छा

इस रंग बदलती दुनिया में, मैं बेरंग ही अच्छा।
झूठे रंगों की भीड़ से, अपना सादा सच्चा ही अच्छा।

जो पल-पल चेहरे बदलते हैं, उनसे दूर ही अच्छा।
दिल में सच्चाई बची रहे, बस बना रहूँ इतना ही अच्छा।

नक़ाबों की इस भीड़ में, असली चेहरा लिए फिरता हूं।
भले ही कोई पहचान न पाए, अपने ज़मीर के साथ ही अच्छा।

जो करते है षड्यंत्र और खुद को दिखाते है अच्छा।
इसे बहुरुपिया से तो,अपनी सादगी के के साथ अच्छा।

इस रंग बदलती दुनिया में, मैं बेरंग ही अच्छा।

वीरेंद्र हीरालाल पथरिया
इंदौर

मुहब्बत

कभी जब किसी से न हारी मुहब्बत।
मज़े में रही ये हमारी मुहब्बत।

कभी मिल गए हमसफ़र रास्ते में,
कभी बस अकेले गुज़ारी मुहब्बत।

निगाहें छुपाकर , निगाहें लगाकर,
यूँही बच-बचा कर निहारी मुहब्बत।

जहाँ पास देखा इक मौका सुनहरा,
वहाँ ठीक हमने उतारी मुहब्बत।

बुलाकर,बताकर ,मनाकर,हँसाकर,
हमेशा यूँ हमने सँवारी मुहब्बत।

जहाँ भी मिले जान पहचान वाले,
वहाँ हमने अपनी बघारी मुहब्बत।

नवीन माथुर पंचोली
अमझेरा धार मप्र

पर्यावरण बचाओ

त्राहि-त्राहि करती है धरती, पौधे हरे लगाओ।
मानव जीवन मिट जाएगा,पर्यावरण बचाओ।।

पोखर सागर सब नद-नाले,बने हुए विष धारा।
सूरज आतप तपन धौंकनी, बढ़ा ताप का पारा।।
धूँ- धूँ कर जंगल जलते हैं,कारण कौन बताओ।
मानव जीवन मिट जाएगा,पर्यावरण बचाओ।।

धूल-धूसरित राहें देखो,जमी हुई है गारी।
कंकरीट के महल खड़े हैं, ऊँचे भवन अटारी।।
नई साज-सज्जा के मद में, वृक्ष नहीं कटवाओ।
मानव जीवन मिट जाएगा,पर्यावरण बचाओ।
खेत रसायन खाद अटी है,भोजन दूषित कितना।
सब्जी और फलों को रँगता, गिरा गर्त मनु इतना।।
मौन तोडकर आगे बढ़कर,मुखर गुहार लगाओ।
मानव जीवन मिट जाएगा,पर्यावरण बचाओ।।

डॉ ऋतु अग्रवाल
मेरठ, उत्तर प्रदेश

उड़ान अन्तरा-सारथी की,..

जिसे विजय के गीत लिखने हैं
जिसे समय पर लेख लिखने है
आकाश की उड़ान है अभी शेष
परिवार ने जिसे बनाया विशेष
अन्तरा में जिसकी बसती है जान
संजीवनी बन दे रही सबको प्राण
रोग, शोक, बाधा भी हार जाती है
प्रीति जब अपने कदम बढ़ाती है
लेखनी जब भी चले सरस्वती साथ
गीत विजय के उतरते नवाते माथ
देख कर तुम्हें हार बदलती है मार्ग
ना थकोगी ना रुकोगी है विश्वास।
चलती रहो,.. अन्तरा-सारथी आ रहे साथ।

डॉ भारती वर्मा बौड़ाई

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

बहुत संभल के चलना पड़ता है,संबंधों की बारिश में!

फिसल कर वक्त की फर्श पर उम्र ढल जाती है।
कई बार बिना जिए भी जिंदगी गुजर जाती है।

जीवन की सबसे बड़ी सच्चाइयों में से एक यह भी है कि **मनुष्य रास्तों पर कम, संबंधों में अधिक फिसलता है**। समय के साथ उम्र तो ढल ही जाती है, पर कई बार रिश्तों की एक छोटी सी चूक पूरे जीवन की गर्माहट छीन लेती है। इसलिए सचमुच, बहुत संभल के चलना पड़ता है, संबंधों की बारिश में।

बारिश का स्वभाव है भिगोना और उसके साथ फिसलन भी आती है। **संबंध भी कुछ ऐसे ही होते हैं। उनमें प्रेम की नमी होती है, अपनत्व की खुशबू होती है। पर यदि अहंकार, अपेक्षाएँ और गलतफ़हमियाँ घुल जाएँ, तो वही नमी रिश्तों की ज़मीन को अस्थिर बना देती है**। फिर एक असावधान शब्द, एक अनदेखी पीड़ा या एक क्षणिक प्रतिक्रिया वर्षों के विश्वास को डगमगा देती है।

आज रिश्ते निभाने से अधिक साबित करने का दौर है। हर व्यक्ति सुना जाना चाहता है, पर सुनना कम चाहता है। हर कोई सम्मान चाहता है, पर सम्मान देना भूलता जा रहा है। यही असंतुलन संबंधों की सबसे बड़ी फिसलन है। **रिश्ते अधिकार से नहीं, संवेदनशीलता से जीवित रहते हैं। उन्हें तर्क नहीं चाहिए। उन्हें विश्वास चाहिए। उन्हें जीत नहीं चाहिए। उन्हें साथ चाहिए।**

संबंधों की सबसे बड़ी खूबसूरती यह है कि वे पूर्णता नहीं, स्वीकार्यता चाहते हैं। **कोई भी व्यक्ति त्रुटिहीन नहीं होता**। यदि हर भूल पर निर्णय और हर कमी पर दूरी बना ली जाए, तो जीवन में साथ चलने वाले लोग बहुत जल्दी कम पड़ जाएँगे। क्षमा, धैर्य और संवाद ही वे आधार हैं जो किसी भी रिश्ते को समय की आँधियों और परिस्थितियों की बारिश से बचाए रखते हैं।

यह भी उतना ही सत्य है कि हर **संबंध को हर कीमत पर बचाना आवश्यक नहीं**। कुछ रिश्ते केवल सुविधा के मौसम तक ही साथ चलते हैं। जहाँ आत्मसम्मान बार बार आहत हो, वहाँ मौन भी एक गरिमामय निर्णय है। **संबंध निभाना श्रेष्ठ है, पर स्वयं को खो देना कभी बुद्धिमानी नहीं।**

अंततः जीवन की सबसे बड़ी संपत्ति धन, पद या प्रतिष्ठा नहीं, बल्कि वे लोग हैं जो सुख-दुःख में हमारे साथ खड़े रहते हैं। इसलिए **संबंधों को शब्दों से नहीं, व्यवहार से सींचिए। अपेक्षाओं से नहीं, विश्वास से जोड़िए। अहंकार से नहीं, अपनत्व से निभाइए।**

क्योंकि वक्त की फर्श पर उम्र का ढलना तो निश्चित है, पर यदि संबंधों की बारिश में हम संतुलन, संवेदना और विवेक के साथ चलना सीख लें, तो **जीवन केवल बीतेगा नहीं, अपनी सुगंध भी छोड़ जाएगा।**

डॉ. प्रीति समकित सुराना

हिन्दी अभिनन्दन

राष्ट की पहचान हिन्दी, जन-जन की शोभा हिंदी।
विश्व साहित्य के वाग का, पुष्प है एक खिला-सा हिन्दी।।
सर्व गुणों की शान है हिन्दी, राष्ट गीत और गान है हिन्दी।
यहि राष्ट की परिचायक, मानवता की शान है हिन्दी।।
राष्ट का दर्शन हिन्दी, जन सेवा है हिन्दी।
अपने देश के हर व्यक्ति की, शिक्षा का आधार है हिन्दी।।
शिष्टता और नम्रता का भाव है इसमें।
आदर और सम्मान का भाव है इसमें।।
हिन्दी पग-पग पर चलाना एवं सभी रिस्तो का ज्ञान कराती।
सनातन ज्ञानामृत का पान कराती।।
हिन्दी से रिश्तों का ज्ञान है, रिश्ते है तो संस्कार है।
संस्कार है तो धर्म है, धर्म है तो जय है।।
हिन्दी भारतीय संस्कृति, परम्पराओं और संस्कारों की संवाहक है।
हिन्दी भारत की राजभाषा, संस्कृति पहचान और एकता का प्रतीक है।।
इस मातृभाषा को बार बार है मेरा कर वंदना।
क्षेत्रीय भाषाओं की जननी को शत् शत् अभिवादना।।

शिवशंकर दुबे (गंगेले)
वारासिवनी जिला बालाघाट (मध्यप्रदेश)

सयानी

ना जाने क्यों
ससुराल जाती ही बेटियां बड़ी हो जाती हैं
सयानी हो जाती हैं
बात बात पर
अपनी बात मनवाने के लिए जिद करने
वाली बेटी ससुराल जाते ही
भूल जाती है
कि वह
खुद क्या चाहती है
सास ससुर
देवर जेठ और पति
उसकी पूरी दुनिया
हो जाते हैं
और
उन्हें खुश रखना
उसका धर्म हो जाता है मायके जाने पर
मां के कोतुहल भरे
प्रश्नों के उत्तर
अपनी हंसी से देती है
ताकि
मां कर सके इत्मिनान
कि
उसकी लाडली
खुश है अपनी ससुराल में लेकिन
मां की भेदती नजरें
पढ़ ही लेती है
बेटी की हंसी के पीछे का दर्द
छिपी हुई अनकही बातें
वो उदासी
वो अबूझे प्रश्न
कि, मां
क्यों भेज देती हो
अपनी लाडली को
अपने से दूर
और
फिर
यह भी चाहती हो
कि
तुम्हारी बेटी खुश रहे
अपनी मां से दूर होकर
कौन बेटी
खुश रह सकती है
लेकिन मां
तुम्हारी ही सीख निभा रही हूं
बेटी थी
बहू होने का फ़र्ज़
निभा रही हूँ
पराई अमानत थी
पराई अमानत का कर्ज़
चुका रही हूँ।

नमिता राकेश

पुस्तक समीक्षा – निबन्ध-संग्रह कंकड़ पत्थर

कंकड़ पत्थर'	अमित कुमार मल्ल
सेल	9391204423
इंडिया नेटबुक्स प्राइवेट लिमिटेड नोएडा	
ISBN:	978-93-498-10-13-6
मूल्य-	250/-
समीक्षक	डॉ. पवन कुमार पाण्डे

साहित्यकार **अमित कुमार मल्ल** हिन्दी साहित्य में एक ऐसी उर्वरा भूमि की तरह है जो निरन्तर कभी सायास तो कभी अनायास कुछ न कुछ उपजाते ही रहते हैं, और जो भी उपज होती है वह सार्थक होती है। किसी भी पक्ष अथवा विचारधारा से अप्रभावित, साहित्यकार मल्ल सहज भाव से साहित्य-सृजन करते जाते हैं। सृजन की इसी यात्रा में कुछ माह पूर्व ही उनका एक निबन्ध संग्रह 'कंकड़ पत्थर' प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में विविध विषयों से सम्बन्धित कुल **20 निबन्ध** है। इस निबन्ध-संग्रह का प्रकाशन इंडिया नेटबुक्स प्राइवेट लिमिटेड नोएडा(**ISBN: 978-93-498-10-13-6**) द्वारा किया गया। इस निबन्ध-संग्रह का **मूल्य 250.00** रुपये हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी का प्रसिद्ध कथन है कि "यदि गद्य कवियों की कसौटी है, तो निबन्ध गद्य की कसौटी है।" यह सत्य ही है कि गद्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा निबन्ध लेखन कठिन है। गद्यकार की प्रतिभा को यहाँ कड़ी चुनौती मिलती है। लेखक की विषय से सीधी भिड़ंत होती है। विषय के प्रस्तुतीकरण एवं उसकी रोचकता को बनाए रखने में भाषा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अमित कुमार मल्ल ने भी भाषा का सहज प्रवहमान रूप अपनाया है। विषय-वस्तु के अनुसार जहाँ भाव आवश्यक है वहाँ सम्बन्धित भाव और जहाँ तथ्य एवं आँकड़े आवश्यक है वह सम्बन्धित तथ्य एवं आँकड़े उपलब्ध प्रस्तुत किए हैं।

इस निबन्ध-संग्रह के विभिन्न विषयों से सम्बन्धित कुल **20 निबन्ध**, विषय-चयन को लेकर निबन्धकार की बहुमुखी प्रतिभा को सिद्ध करते हैं। निबन्धकार द्वारा इस निबन्ध-संग्रह का शीर्षक '**कंकड़ पत्थर**' रखना भी कुछ संकेत करता है। श्री मल्ल जो, जैसा है, उसे उसी रूप में देखना एवं दर्शाना चाहते हैं। कृत्रिमता से दूर, वे किसी प्रकार से विषय को तराशकर कृत्रिम रूप से चमकाना नहीं चाहते। विषय-वस्तु की अनगढ़ता में भी वे सौन्दर्य देखते हैं। जो सराहनीय है।

पिछली सदी के अंतिम दशक से लेकर वर्तमान तक, निबन्धकार ने जो भी सजग, असजग एवं सहज रूप से देखा वह सब इस संग्रह में देखा जा सकता है। निबन्धों के विषय किसी परिधि तक सीमित नहीं है। 'धार्मिक सहिष्णुता एवं धर्म के सामान्य तत्त्व' की चर्चा करते हुए 'धर्म निरपेक्षता और भारत' की भी बात करते हैं। इसी कड़ी में 'मध्यकालीन संत परम्परा व सामाजिक चुनौतियाँ' भी दर्शाते हैं। 'राष्ट्रीयता: खून का माटी से सम्बन्ध' के साथ ही 'स्वतंत्रता संग्राम के सबक' पर भी प्रकाश डालते हैं। समय के साथ प्रशासन की कार्यशैली में जो परिवर्तन हो रहे हैं उनकी पड़ताल 'भारत की कार्य संस्कृति: बदलाव की पहल और विकास' में करते हैं तो 'प्रवासी हिन्दी साहित्य: एक अध्ययन' तथा 'प्रवासी हिन्दी साहित्य व प्रवासी संस्कृति' में अपनी पकड़ वैश्विक स्तर के साहित्य एवं उसकी स्थिति एवं स्वरूप पर होने का प्रमाण देते हैं। साथ ही 'विश्व में हिन्दी', 'समाज और हिन्दी साहित्य', 'भारतीय भाषा चिन्तन', 'राजभाषा हिन्दी से सम्बन्धित संवैधानिक दायित्व' पर भी विस्तृत जानकारी हमें देते हैं।

'अद्वितीय संगीत वैज्ञानिक व दार्शनिक-जयदेव सिंह' इस संग्रह का एकमात्र निबन्ध है जो किसी व्यक्ति विशेष की बात करता है। '**प्राचीनकाल में पर्यावरण**', '**मिलना एक दुर्लभ शिव प्रतिमा का**', '**दक्खिन टोले का सवाल**', '**पूर्वोत्तर भारत में महिलाओं की स्थिति**' '**दूसरी मार्क्सवादी क्रान्ति, मार्क्सवाद की नियति थी**', '**सोशल मीडिया: एक विश्लेषण**' जैसे निबन्ध, निबन्ध लेखक की बहुआयामी प्रतिभा के साक्षात प्रमाण है। इन विभिन्न निबन्धों का उपसंहार मानो संग्रह के अंतिम निबन्ध '**बृहत्तर भारत**' शीर्षक निबन्ध में प्रतीकात्मक रूप से होता है।

इस निबन्ध-संग्रह का आरम्भ '**धार्मिक, सहिष्णुता एवं धर्म के सामान्य तत्त्व**' शीर्षक निबन्ध से होता है। इस निबन्ध में मल्ल निस्संकोच भाव से कहते हैं कि "ईश्वरीय प्रकाशना या पैगंबरों के उपदेशों के परिणामस्वरूप उद्भूत धर्मों में यह लचीलापन कम दृष्टिगत होता है।

..........इनके धर्मग्रन्थों में जो कुछ भी लिखा गया है, वह पूर्णत: सत्य है क्योंकि वे ईश्वर के वचन ही है। पूर्णत: सत्य होने के कारण जो भी तत्व उन पुस्तकों के अनुकूल नहीं है, उन्हें धर्मविरोधी मान लिया जाता है। इसीलिए पैगंबरी धर्मों में, आरम्भकाल में वह सहिष्णुता नहीं मिलती जो हिन्दू, बौद्ध, जैन धर्मों तथा कन्फूशियसवाद और ताओवाद में है।" संसार में प्रचलित प्रमुख धर्मों के स्वरूप तथा मान्यताओं एवं ईश्वर के स्वरूप को लेकर जो चिन्तन हुआ है श्रीमल्ल क्रमवार रूप से दर्शाते हैं। अंत में अपनी ओर से निष्कर्ष रूप से विभिन्न धर्मों के संदर्भ में कहते हैं "हमें बाह्य स्वरूप के आड़म्बर के चक्कर में न पड़कर अपनी दृष्टि को संकुचित दायरे से बाहर करना ही होगा, तभी हम 'वसुदैव कुटुम्बकं' की युक्ति को चरितार्थ कर पाएंगे।

'**धर्मनिरपेक्षता और भारत**' निबन्ध में जो विकृत स्थिति भारत में धर्मनिरपेक्षता की मिलती है उसे श्री मल्ल बिना लाग-लपेट के इन शब्दों में दर्शाते हैं "धर्मनिरपेक्षता के नाम पर लागू नीतियों से कभी सांप्रदायिकता की बू आती है तो कभी सांप्रदायिक नीतियाँ ही धर्मनिरपेक्ष मानी जाती है।"

"**भारत की कार्य संस्कृति: बदलाव की पहल और विकास**' निबन्ध लोक कल्याणकारी सरकारी योजनाओं की कार्यप्रणाली से सम्बन्धित जानकारी तथा वर्तमान में शासन की गतिविधियों पर उनकी सजगता को भी दर्शाता है। "राजकीय कार्यों में नियमों पर अत्यधिक बल दिया जाता है जबकि निजी क्षेत्र में परिणाम पर अधिक बल दिया जाता है।" इस एक पंक्ति के माध्यम से निबन्धकार बहुत कुछ उजागर कर जाते हैं।

'**प्राचीन काल में पर्यावरण**' शीर्षक निबन्ध उनके अध्ययन की व्यापकता को सिद्ध करने में पर्याप्त है। जिसमें ऋग्वेद एवं महाभारत सहित कई ग्रन्थों की चर्चा इस दृष्टि से वे करते हैं।

'**राष्ट्रीयता:खून का माटी से सम्बन्ध**' में वे तथाकथित बुद्धिजीवियों के राष्ट्रीयता के संदर्भ में जो (कु)तर्क है, के संदर्भ में लिखते हैं "यह राष्ट्रीयता की ही बात है कि सऊदी अरब में पैदा होने पर मिट्टी का तेल लगभग फ्री मिलता है और हिन्दुस्तान में पैदा होने पर पानी मुफ्त मिलता है। ब्रितानी भारत में रेलवे टिकट रखकर भी आप अंग्रेजों के कूपे में नहीं बैठ सकते थे, चाहें आप अंग्रेज से अधिक धनी व शिक्षित क्यों न हो?" इसी निबन्ध में "स्वतंत्र राष्ट्र में, राष्ट्रवादी कहने में कुछ लोगों को शर्म आने लगी। राष्ट्रगान की परिभाषा और उसके गाने के स्थान को लेकर बहस शुरू हो गयी,........ विविधता में एकता, कहते-कहते, विविधता पर इतना बल हो गया कि, विविधता में एकता का नारा नीचे से पानी उठाकर उसे बाहर खेत मैदान में उलीच देने वाले निर्जीव रहट की आवाज बन गई।" इस विषय से जुड़ी विडम्बनाओं के वे यहाँ स्पष्ट कर देते हैं।

साहित्य की वास्तविक भूमिका पर प्रकाश डालते हुए वे लिखते हैं 'समाज और हिन्दी साहित्य' निबन्ध में मल्ल लिखते हैं "साहित्य को समाज के साथ-साथ नहीं वरन् उसके आगे चलना चाहिए, तभी साहित्य समाज का साथ दे पाएगा।" "**दूसरी मार्क्सवादी क्रान्ति, मार्क्सवाद की नियति थी**' निबन्ध में "दरअसल मार्क्सवाद की सबसे बड़ी कमी यह रही कि उसने मनुष्य को आर्थिक मंत्र मान लिया क्योंकि मनुष्य अपनी लाख सार्वजनिकता के बावजूद भी एक आंतरिक व्यक्ति भी होता है। मार्क्सवादी मसलों का यह सिद्धांत भूल गए कि रोटी न मिलने तक ही, रोटी सर्वप्रमुख समस्या है, किन्तु जब वह पूरी हो जाएगी तब भावनात्मक, संवेदनात्मक आवश्यकता महसूस होती है और इसे "वस्तुओं का शासन"(मार्क्सवाद) द्वारा नहीं पूरा किया जा सकता।" मार्क्सवाद के मूल सिद्धांतों को लेकर उनके ये विचार प्रबुद्ध पाठक की दृष्टि खोलने में पर्याप्त सक्षम है।

वर्तमान समय में जहाँ एक भाव अथवा विचार-विषय-वस्तु का विशेषज्ञ बनकर अधिकतर साहित्यकार चलना चाह रहे हैं ऐसे में किसी एक ही पुस्तक में बहुत कुछ एक साथ लेकर आना स्वागत योग्य है। किसी एक पुस्तक में बहुत कुछ साथ देखने की चह रखने वाले पाठको को 'कंकड़ पत्थर' शीर्षक इस निबन्ध-संग्रह का अध्ययन अवश्य करना चाहिए ताकि निबन्धकार को प्रोत्साहन मिल सके। और साहित्यकार अमित कुमार मल्ल की लेखनी इसी प्रकार निर्बाध रूप से सार्थक सृजन करती रहे।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद दु:खभाग्भवेत्।।"

समीक्षक- डॉ. पवन कुमार पाण्डे
सह आचार्य हिन्दी
गवर्नमेंट डिग्री कॉलेज भैंसा, जिला निर्मल तेलंगाना।
9848781540 pandeypavan67@gmail.com

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

सृजक-सृजन समीक्षा रविवारिय केंद्रीय रचनाकार विशेषांक

आज अन्तरा शब्दशक्ति के पटल पर रीति झा, जमशेदपुर (झारखण्ड) का परिचय एवं उनकी पाँच रचनाएँ पाठकों की समीक्षा एवं विचारार्थ प्रस्तुत हैं।

सरल, सहज और भावप्रधान गद्य में लिखी गई इन रचनाओं में यादें, जीवन-दर्शन तथा सकारात्मक विचारों का सुंदर समन्वय झलकता है।

आप सभी सुधी पाठकों एवं साहित्यकारों से विनम्र अनुरोध है कि रचनाओं का गंभीरतापूर्वक अध्ययन कर अपनी निष्पक्ष, सारगर्भित एवं रचनात्मक समीक्षा अवश्य प्रदान करें। आपके सुझाव और मार्गदर्शन किसी भी रचनाकार के सृजन-पथ को नई दिशा और ऊर्जा प्रदान करते हैं।

प्रस्तुतकर्ता: डॉ. प्रीति समकित सुराना संस्थापक एवं संपादक

अन्तरा शब्दशक्ति

रचनाकार का परिचय

नामः रीति झा
जन्मतिथि: 13/09/1979
माता-पिता: श्री बैंकुठ ठाकुर, स्वर्गीय श्यामा देवी
पति: श्री प्रभु शेखर झा
शिक्षा: एम ए, बी.एड
भाषा: हिंदी, मैथिली
लेखन-विधाएँ: कविता, लघुकथा, कहानी, बाल-साहित्य, लेख, गीत

सम्मान: राम रत्न सम्मान साहित्य श्री सम्मान अहिल्या बाई होलकर सम्मान

आत्मकथ्य :

मैंने वर्ष 2019 से लेखन कार्य प्रारंभ किया है।कई स्थानीय अखबार एवं पत्र पत्रिकाओं में मेरी रचना प्रकाशित हुई है। मैं कई साहित्यक संस्था जैसे तुलसी भवन हिंदी साहित्य, एम एस पब्लिकेशन, दिनकर परिषद, अनुपमा सबकी सहेली आदि से जुड़ी हूं।

प्रकाशित कृतियाँ:

स्थायी पता: ब्लॉक नम्बर 35/2-2 **रोड नम्बर:** 19 आदित्यपुर-1, जमशेदपुर, झारखंड
ई-मेल: reetijhaa@gmail.com **मोबाइल:** 9234696500

रचनाएँ

ममता का आंचल

"हाँ शालिनी, सचमुच... अतीत की धुंधली सी परछाई कमल के आँखों के सामने से गुजरने लगी।

उस दिन तो शायद मुझे बस ने कुचल ही दिया होता, अगर उस ममता की मूर्ति ने मुझे पीछे से आवाज़ न लगाई होती। एक पल के लिए मेरी आँखों के सामने अंधेरा छा गया, और जब आँख खुली तो मैं उनकी गोद में सिर रखकर सोया हुआ था। जैसे ही मुझे होश आया, मैंने देखा—लोग हम दोनों को गाड़ी में बिठाकर अस्पताल ले जा रहे थे। ज़रा सी मरहम-पट्टी के बाद मैं तो ठीक हो गया, पर शायद मेरी बदकिस्मती को उस महिला ने अपने सिर ले लिया था। उस एक्सीडेंट में उनकी बाई टांग काटनी पड़ी।

मैं मन ही मन उस ईश्वर को एवं अपने भाग्य को कोस रहा था कि एक तो मैंने पहले ही हादसे में अपने माता-पिता को खो दिया था और अब, जिसने मेरी जान बचाई, उसे भी मेरी वजह से अपाहिज़ होना पड़ा। मैं वहीं बैठकर सुबक-सुबक कर रोने लगा। उस वक्त भूख भी जैसे गायब हो गई थी, जिसके कारण मैं सुबह से लोगों के आगे हाथ पसारते हुए सड़क पार कर रहा था, जब ये घटना घटी।

अपने पास से चिकित्सकों के जाते ही उस महिला ने मुझे आवाज़ लगाई—

"बेटा, सुनो! ज़रा मुझे पानी की बोतल तो देना, प्यास लगी है।"

मैं उनके समीप पड़ी बोतल से पानी गिलास में डालते हुए बोला, "जी, मालकिन।"

उन्होंने मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, "नहीं बेटा, मालकिन नहीं। मुझे तुम 'माँ' कह सकते हो। मेरे भी दो बच्चे हैं, बिल्कुल तुम्हारी ही तरह।"

अब तो मेरे आँसुओं का बाँध और भी टूट गया। आँखों से जैसे सैलाब उमड़ पड़ा था। मैं उनके पाँव को सहलाता हुआ उनसे माफी माँगने ही वाला था कि उन्होंने आगे झुककर मेरे हाथ पकड़ लिए और मेरे आँसुओं को पोंछती हुई कहने लगी—

"उदास मत हो बेटा, और अपने मन पर कोई बोझ मत लो। ये तो समय की बात है। मैं ऐसी ही थोड़ी न रहूँगी। देखना, मैं एक दिन बिल्कुल ठीक हो जाऊँगी।"मुस्कुराती हुई बोली

"अरे हाँ, तुम्हें तो भूख लगी होगी, है ना? आओ, पहले कुछ खा लो।"

मैंने अनचाहे मन से मना किया, किंतु उनकी ममता के आगे और कुछ न कह पाया। चुपचाप उनके पास ज़मीन पर बैठने लगा। सहसा ही फिर उन्होंने आवाज़ लगाई—"अरे बेटा, वहाँ नहीं, यहाँ मेरे पास बैठो।" ऐसा कहते हुए उन्होंने मेरी ओर कुछ फल बढ़ाए और कहा, "खा लो बेटा।" मैने फलों को खाते हुए जब उनकी ओर देखा उनके चेहरे पर उदासी साफ नज़र आ रही थी। मैं पूछ बैठा—"क्या बात है माँ? आप उदास क्यों हो?"

फिर वह बोलीं, "नहीं बेटा, ऐसी कोई बात नहीं।"

अपनी उदासी छिपाते हुए मुझसे मेरा नाम पूछने लगीं—"बताओ, तुम्हारा नाम क्या है?" मैंने कहा, "कमल।" "वाह! यह तो बहुत ही प्यारा नाम है। और तुम कहाँ रहते हो बेटा?" मैंने कहा, "पता नहीं माँ। मैंने बचपन में ही अपने माँ-पिताजी को खो दिया था और तभी से मैं अपने चाचा के पास रहने लगा। किंतु मेरी चाची मुझे बहुत प्रताड़ित करती थी—दिन भर काम करते रहो और खाने को भी रूखी-सूखी देती थी। एक दिन मुझ पर चोरी का इल्जाम लगाते हुए मुझे घर से बाहर निकाल दिया। मैं बहुत रोया, गिड़गिड़ाया, किंतु उन्होंने मेरी एक न सुनी। तभी से मैं यूँ ही सड़क पर छोटे-मोटे लोगों के काम करके अपना पेट पाल लेता हूँ। आपका बहुत-बहुत शुक्रिया, जो आपने मेरी जान बचाई। नहीं तो पता नहीं आज शायद मैं आपके सामने नहीं होता।"

तभी झट से उन्होंने मेरे मुँह पर हाथ रखते हुए कहा— "चुप हो जा।" जैसे उनकी बातों में एक अधिकार छलक रहा था। उन्होंने फिर अपनी बात दोहराते हुए कहा —

"आज से तू अपने आपको अकेला मत समझ। मैं तुम्हारी माँ हूँ और तू मेरे पास ही रह।"

फिर मैंने जिद करते हुए उनसे उनके बारे में पूछा। और जब उन्होंने अपने बारे में बताया तो मैं सोच में पड़ गया कि, "हे भगवान! दुनिया में इतने भी दुख होते हैं क्या?" उनका भरा-पूरा परिवार था, पर आपसी गलतफहमी के कारण उनका अपने पति के साथ तलाक हो चुका था। उनके जो दो बच्चे थे, जिनकी चर्चा उन्होंने पहले की थी, वे दोनों उनके ही पास रहते थे, पर कभी माँ से मिलने नहीं आते थे। आज उनके पास सब कुछ था—धन-दौलत, किंतु कहने को कोई अपना नहीं था, जिससे वे अपने मन की पीड़ा बाँट सकें या जिन्हें वे अपना कह सकें।

उनके बारे में बताते-बताते उनकी आँखें नम हो गई। मैंने उनकी आँखों से आँसू पोंछते हुए कहा— "नहीं माँ, मैं हूँ ना आपका बेटा, और मैं सदा आपके पास ही रहूँगा। मैं आपको छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगा।"

तभी मैंने निश्चय किया कि आज से मैं इनका सहारा बनूँगा। उन्होंने मुझे दुनिया की हर वह खुशी दी, जो एक माँ अपनी औलाद को देती है। उन्होंने मुझे पढ़ाया-लिखाया, इस काबिल बनाया कि मैं अपने पैरों पर खड़ा हो सकूँ। जब मैं नौकरी के लिए बाहर गया तो लगातार मेरा अच्छे स्थानों पर चयन होता चला गया। मैं एक नई जिम्मेदारी लेकर एक अच्छी-सी नौकरी में पदस्थापित होकर जब पुन: माँ के पास आया, तो पता चला कि माँ अब इस दुनिया में नहीं रहीं।

कुछ चार-पाँच साल ही बीते थे मेरे उनके पास से बाहर गए हुए। मेरे मन में एक प्रश्न सा रह गया कि ऐसा क्या हुआ होगा? माँ क्या सोच रही होगी कि मेरे आने का उन्होंने इंतजार भी नहीं किया और मुझे छोड़कर हमेशा के लिए दुनिया को अलविदा कह गई।

मैं बहुत उदास हो गया और अपने मन को धिक्कारने लगा कि मैंने माँ से जो वादा किया था, वह पूरा नहीं कर सका कि 'मैं आपको छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगा।'

इस प्रकार, मैंने उनकी याद में उनकी ही मूर्ति को देवताओं की तरह पूजते हुए जीवन-यापन करने लगा।

कई वर्ष बीत गए। फिर दोस्तों ने मुझे समझाया कि— "यार, शादी कर ले। कितने दिन यूँ ही अकेला जीवन गुजारते रहोगे?"

...और फिर मुझे तुम मिली।

आज सब कुछ है मेरे पास—मेरा परिवार, घर, धन-दौलत—लेकिन आज भी जब मुझे वह ममता का आँचल याद आता है, तो मैं ईश्वर का धन्यवाद करता हूँ और उनकी आत्मा की शांति के लिए सदैव प्रार्थना करता हूँ। हर जन्म में मुझे आपकी तरह ही माँ मिले, जिनके चरणों में बैठकर मैं सुकून से अपने जीवन को बिता सकूँ।"

दहलीज

राधा के बोर्ड का रिजल्ट आ गया था और उसे बाहर जाकर पढ़ाई करनी थी। उसने घर आकर अपनी मां से कहा, "मैं आगे बाहर जाकर पढ़ना चाहती हूं।"

घर के सभी सदस्यों ने हामी भर दी, किंतु दादी नाराज थीं।

यह बात पूरे घर के अलावा मुहल्ले में भी फैल गई। लोग आकर मिश्रा जी को समझाने लगे। कोई कहता, "क्या करोगे बेटियों को इतना पढ़ा कर? उसका ब्याह नहीं करना है क्या? उसके लिए वर ढूंढने में कितनी मुश्किल होगी, जानते भी हो?"

तो वहीं दूसरा व्यक्ति कहता, "बेटियों को बाहर भेजना है तो सोच लो, कहीं ऐसा न हो कि वो वापस आए ही न। कुल की मान-मर्यादा का कुछ तो ख्याल करो।"

वहीं, कुछ लोग मिश्रा जी के फैसले का सम्मान करते हुए यह भी कहते, "आजकल किसी भी क्षेत्र में बेटियां बेटों से कम थोड़ी न हैं।"

मगर अनेकों नकारात्मक विचारों के बीच ये सकारात्मक बातें कहीं दब सी गई थीं और मामला पंचायत तक पहुंच गया।

अगली सुबह पंचायत बुलाई गई। सभी ने अपने-अपने मत प्रस्तुत किए और फैसला हुआ कि, "क्यों न राधा की शादी कर दी जाए? वह अपने पति के साथ जहां चाहे जा सकती है।"

सबने पंचायत के फैसले का सम्मान किया।

राधा बेचारी सिसकियां लेती हुई अनचाहे मन से ब्याह के बंधन में बंध गई। उसके बाद उसने कई बार अपने आगे की पढ़ाई करने की बात अपने पति एवं ससुराल वालों से कही, मगर किसी ने एक न सुनी और सब यही कहकर टाल देते, "घर-गृहस्थी संभालो।"

इसी दौरान राधा ने एक सुंदर शिशु को जन्म भी दिया। किंतु उसका मन न तो घर-गृहस्थी में लगता, न ही शिशु को संभालने में।

एक दिन उसने यह फैसला लिया कि चाहे जैसे भी हो, मैं आगे की पढ़ाई करके ही दम लूंगी।

उसने पड़ोस में रहने वाली नीलिमा भाभी का सहारा लिया जो पेशे से वकील थीं, और न्यायालय का दरवाजा खटखटाया।

अंततः कोर्ट के आदेश के सामने किसी की नहीं चली और कोर्ट ने आदेश दिया कि राधा को आगे पढ़ने के लिए कॉलेज में दाखिला करवाया जाए और उसके बच्चे को घर पर उसकी सासू मां संभालेंगी।

आज राधा के कॉलेज का पहला दिन था।

सुबह उठकर घर का सारा काम-काज निबटाकर राधा कॉलेज के लिए घर से निकलने से पहले भगवान का आशीर्वाद लेकर सभी बड़ों के पैर छुए और निकल पड़ी — अपनी सपनों की दुनिया तलाशने।

आज वह बहुत खुश थी, क्योंकि आज उसने पहली बार स्वयं के सपनों के लिए दहलीज पार किया था।

छूटते रिश्ते

गाँव के पुराने मिट्टी के घर के आँगन में दादी अपनी पुरानी संदूक खोलकर बैठी थीं। तभी उनकी पोती रचना भागती हुई आई और उत्साह से बोली,

दादी! इस बार मेरे जन्मदिन पर तीन मंज़िला बड़ा-सा केक आएगा। सब दोस्त आएँगे, मोमबत्तियाँ बुझाऊँगी और खूब फोटो भी खिंचवाऊँगी।

दादी मुस्कुराई। उन्होंने रचना के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा,

अच्छा है बिटिया, खुशियाँ मनानी चाहिए। लेकिन हमारे समय में जन्मदिन कुछ अलग तरह से मनाया जाता था।

रचना आश्चर्य से बोली, कैसे दादी? तब केक नहीं काटते थे क्या?

दादी की आँखों में पुरानी यादें उतर आईं।

नहीं बेटी, तब गाँव में केक कहाँ मिलता था। जन्मदिन के दिन माँ सुबह-सुबह स्नान कराकर नए कपड़े पहनाती थीं। घर के मंदिर में दीपक जलता था। फिर गुड़ और आटे का मीठा हलवा बनता था। परिवार के बड़े आशीर्वाद देते थे और हम सब मिलकर वही मिठास बाँटते थे।

रचना ध्यान से सुन रही थी।

दादी आगे बोलीं,

“आज केक कटता है, मोमबत्तियाँ बुझती हैं, तस्वीरें खिंचती हैं। पहले दीपक जलाए जाते थे और रिश्तों की गर्माहट महसूस होती थी। फर्क बस तरीके का है, खुशी तो दोनों समय में समान थी।”

इधर दादा जी भी कुछ चुप चाप से बैठे थे मानो बेमन से वे अपनी खुशी का इजहार कर रहे हो।

पूछने पर रूआंसा स्वर में बोले जब हम विवेक (रचना के पिता) का जन्मदिन मनाते थे पूरे परिवार के साथ साथ रिश्तेदारों एवं आस पड़ोस में भी खुशी का महौल होता था। सारे रिश्तेदार मिलकर हंसी ठिठोली करते हुए बेसब्री से शाम होने का इंतजार करते थे कि कब केक कटेगा? और केक काटने के बाद उसके न जाने कितने टुकड़े होते सबके प्लेट में मिक्सचर बिस्किट के साथ वो केक का छोटा सा टुकड़ा सचमुच बहुत स्वादिष्ट लगता था। फिर खाना खाने के लिए एक साथ पंक्तियों में बैठना एक दूसरे को खाना पड़ोसना मानो एक अलग ही आनंद देता था।सभी बड़ों का आशीर्वाद मित्रगण की शुभकामनाएं जन्मदिन को कुछ खास ही बना देता था।

अब का समय कुछ और ही है भले ही केक काटने की परम्परा बदली नहीं किंतु अब न रिश्ते नाते हैं न ही पड़ोसी, बस एकाकी जीवन आपस में ही केवल जन्मदिन का उत्सव मन कर रह जाता है । सोशल मीडिया पर तस्वीरें डालना, शुभकामनाएं प्राप्त करना बस इसी को लोग जीवन का आनंद समझ लेते हैं।

उनकी इन बातों से उनके अकेलेपन का एहसास साफ झलक रहा था।

सचमुच लोगों को महत्वाकांक्षी प्रवृत्ति, व्यक्तिगत स्वार्थ और सोशल मीडिया की चकाचौंध का प्रभाव इस कदर प्रभावित किया है कि जहां पहले पड़ोसी भी रिश्तेदार हुआ करते थे वहीं आज रिश्तेदार भी पड़ोसी बनकर रह गये हैं।

पिता का दर्द

निकल ही गए आंसू आज, जब बेटे ने मांगा अपना हिस्सा।
एक बार पूछ लिया होता तो शायद, कह देते अपने उदास दिल का किस्सा।।
कि कैसे बताऊं मैं जब तू अपनी नौकरी पर गया था ।
मेरे शरीर ये बस यहां मन तेरे साथ ही गया था।।
खुश था बहुत तुझे देखकर, मां लेती थी बलाएं।

लुटाती थी निज खुशियां भर-भर के देती थी दुआएं।
व्याह कर जब लाया था, अपनी पसंद की दुल्हन।
चाहा तो था खुश हो लूं पर, मेरे दिल में थी एक चुभन।।
एक ख्वाइश थी दिल में मेरे, मुझे भी कहता कोई दादा।
वरदान पाया ईश्वर से जिसे ,वो दूर ही मुझसे रहा ज्यादा ।।

हर पल तड़प -तड़प कर बीती ज़िन्दगी इसी आस में।
कोई तो होगा वो दिन जब आएगा वो मेरे पास में।।
ख्वाइश इतनी ही थी मेरी, की मिलकर एक छत के नीचे।
रहते बहु बच्चों के संग निज स्नेह जल से अपने आशियां को सींचे।।
पर हाय, भगवान ने मुझे दिन ये क्या दिखाया।
मौत के शैया पर से जब आवाज़ तुझे लगाया।।
तुने एक बार भी ना सोचा पिता को मेरी ज़रूरत है
भेज दिए पैसे कहा मुझे अभी आने की नहीं फुर्सत है।
रुक जाएगी जब ये सांसे, कोई तुम्हें बेटा नहीं पुकारेगा
उस दिन तुझे शायद मेरा साथ याद आएगा।
पर अफसोस की तब मैं नहीं ये दुनिया किस्सा तुम्हे सुनाएगा ।
शायद उस दिन मांगा हुआ हिस्सा, तुम्हें मिल जाएगा।

संस्मरण — शिक्षिका बनने का सफर : मेरी जीवन गाथा

"रजनी! क्या तुम मेरे विद्यालय में पढ़ाओगी?" सहेलियों के साथ खेलते समय अचानक मेरे कानों में ये शब्द पड़े। पीछे मुड़कर देखा तो एक महिला मेरे सामने खड़ी थीं। उनके चेहरे पर आत्मीयता, सादगी और सौम्यता से भरी मुस्कान थी। मैंने झट से आभार व्यक्त करते हुए हाँ कह दिया। उन्होंने अगले दिन विद्यालय आने का समय बताया और चली गई। उस समय मैं स्वयं नौवीं कक्षा की छात्रा थी। बचपन से ही शिक्षिका बनने की प्रबल इच्छा थी, इसलिए यह अवसर मेरे लिए किसी सपने के सच होने जैसा था।

घर पहुँचकर जब मैंने यह बात माँ को बताई तो माँ और मेरी तीनों बहनें हँस पड़ीं। मैं नाराज़ होकर एक कोने में जा बैठी। थोड़ी देर बाद माँ मेरे पास आई और बोलीं, “बेटा, शिक्षक का कार्य बहुत जिम्मेदारी का होता है, क्योंकि बच्चों का भविष्य संवारना ही शिक्षक का परम कर्तव्य है। तुमने हाँ कह दी है तो मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।” माँ की बातों ने मुझे आत्मविश्वास से भर दिया।

अगले दिन माता-पिता का आशीर्वाद लेकर मैं विद्यालय पहुँची और यहीं से मेरे शिक्षक बनने की यात्रा प्रारम्भ हुई। वह एक प्ले स्कूल था, जिसकी अवधि मात्र दो घंटे की थी। बच्चों को खेल-खेल में पढ़ाते हुए दो वर्ष कब बीत गए, पता ही नहीं चला। इसी दौरान मैं कुछ बच्चों को ट्यूशन भी पढ़ाने लगी और अपनी पढ़ाई भी जारी रखी। चार बहनों में सबसे छोटी होने के कारण मुझे परिवार का भरपूर प्यार और सहयोग मिला।

लेकिन बोर्ड परीक्षा के परिणाम के बाद मेरे जीवन में दुखों का पहाड़ टूट पड़ा। मेरी माँ का देहांत हो गया। उस घटना ने मुझे भीतर तक झकझोर दिया। मेरी दो बड़ी बहनों का विवाह हुआ और मैं अपनी पढ़ाई में लगी रही। परन्तु नियति को कुछ और ही मंजूर था। बी.ए. द्वितीय वर्ष का परिणाम किसी कारणवश लंबित रह गया और पिताजी ने मेरा विवाह करवा दिया। उस समय मुझे लगा कि मेरा शिक्षिका बनने का सपना अधूरा रह जाएगा।

विवाह के लगभग पाँच वर्ष बाद मैंने अपने पति से आगे पढ़ने की इच्छा व्यक्त की। उन्होंने बिना किसी संकोच के मेरी बात स्वीकार कर ली। ससुराल पक्ष की सहमति और सहयोग से मैंने अपनी पढ़ाई पुन: आरम्भ की। पाँच वर्षों के अंतराल के बाद पढ़ाई शुरू करना आसान नहीं था। एक ओर घर-परिवार की जिम्मेदारियाँ और दूसरी ओर मेरा छोटा बेटा, जिसकी देखभाल मेरी सासू माँ बड़े प्रेम से करती थीं।

धीरे-धीरे मैंने बी.ए. के बाद एम.ए. की पढ़ाई पूरी की। इसी दौरान मुझे हिंदी विभाग की आदरणीय प्रोफेसर सूर्या मैम का स्नेह और मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। वे अनुशासनप्रिय थीं और समय की बहुत पाबंद थीं। घर के काम निपटाकर कॉलेज पहुँचने में मुझे कई बार देर हो जाती थी। जब मैंने अपनी परिस्थितियाँ उन्हें बताई तो उन्होंने स्नेहपूर्वक कहा, “यदि देर हो जाए तो पीछे के दरवाजे से आकर चुपचाप बैठ जाना।” उनकी कक्षा मैं कभी छोड़ना नहीं चाहती थी।

सुबह पूरे परिवार के लिए भोजन बनाना, बेटे को तैयार करना, पति को टिफिन देकर कार्यालय भेजना और फिर स्वयं कॉलेज जाना इन सबके बीच कई बार देर होना स्वाभाविक था। फिर भी सूर्या मैम ने हमेशा मुझे प्रोत्साहित किया। वे मेरी लेखनी की प्रशंसा करते हुए कहती थीं कि मैं हर विषय को मन लगाकर लिखती हूँ। उनका यह प्रोत्साहन मेरे लिए प्रेरणा का स्रोत बन गया।

एम.ए. पूर्ण करने के बाद मुझे अपने ही शहर के एक प्रतिष्ठित विद्यालय में अस्थायी शिक्षिका के रूप में नियुक्ति मिली। इंटरव्यू में पूछे गए अनेक प्रश्नों के उत्तर मैं सूर्या मैम की कक्षाओं में सीखी बातों के आधार पर दे सकी और सफल हुई। लेकिन कुछ समय बाद पता चला कि बिना बी.एड. के विद्यालय में स्थायी नियुक्ति संभव नहीं है। मैं निराश हो गई, परंतु विद्यालय की अन्य शिक्षिकाओं ने मुझे दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से बी.एड. करने की सलाह दी। मैंने परिश्रमपूर्वक बी.एड. पूरा किया और परिणाम आने के बाद उसी विद्यालय में स्थायी शिक्षिका के रूप में नियुक्त हो गई।

वर्ष 2010 से लेकर आज तक मैं उसी विद्यालय में अपनी सेवाएँ दे रही हूँ। इस दौरान मुझे अनेक क्षेत्रों में कार्य करने और सफलता प्राप्त करने का अवसर मिला, किन्तु शिक्षिका के रूप में नियुक्ति की जो खुशी थी, वह आज भी मेरे चेहरे पर मुस्कान बिखेर देती है।

जीवन में मैंने अनेक उतार-चढ़ाव देखे। कई बार असफलताओं ने निराश किया, तो सफलताओं ने संभाल लिया। आज मैं जो कुछ भी हूँ, उसमें मेरी माँ के आशीर्वाद, मेरे पति के प्रेम, समर्पण और निरंतर प्रोत्साहन का सबसे बड़ा योगदान है। उन्होंने हर उस क्षण मेरा साथ दिया, जब मैं हतोत्साहित हुई।

मैं ईश्वर का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ कि उन्होंने मुझे ऐसा जीवनसाथी दिया। साथ ही स्वयं को गौरवान्वित महसूस करती हूँ कि मैं अपनी माँ के उस सपने को पूरा कर सकी, जिसे वे हमेशा अपने हृदय में संजोए हुए थीं।

माँ, आप जहाँ कहीं भी हों, अपना आशीर्वाद सदैव बनाए रखिए।

रीति झा

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

पहाड़ों के उस पार वाली दुनिया

क्या है
पहाड़ों के उस पार?

नदी, पेड़, घर, फूल
या खंजर?

देखना चाहती हूँ मैं,
जीना चाहती हूँ
वो दुनिया में।

इस पार तो
दुनिया की भागदौड़ है।

क्या उस पार
सुकून होगा?

क्या उस पार
चैन मिलेगा?

लोगों का कहना है,
ये दुनिया बहुत खूबसूरत है।

तो क्या
उस पार वाली

इससे भी ज़्यादा
खूबसूरत होगी?

देखना चाहती हूँ,
जीना चाहती हूँ

पहाड़ों के उस पार वाली
दुनिया भी।

जाह्नवी मालेवार

उम्मीद है तो जीवन है

संसार में जीवन किसका सरल है,
पक्षी, जानवर हो या इंसान,
हालात का बरसता कहर है।
हवा, पानी, बिजली, आँधी,
तूफानों का सबको डर है।
लेकिन,
उम्मीद है तो जीवन है।

रिश्तों में पनपती दूरी,
दोस्ती के बीच रंजिश,
शादियों में होती है साजिश,
प्रेम में विफलता का डर है।
लेकिन,
उम्मीद है तो जीवन है।

शिकारी घूमते चारों तरफ,
सुरक्षित नहीं रहे हैं अब घर।
मुख पर चढ़ाकर मुखौटा,
घूमते बहरूपियों का डर है।
लेकिन,
उम्मीद है तो जीवन है।

कठिन बड़ा है ज़िंदगी का सफर,
काँटे बिछे हुए हैं पग-पग।
पत्थरीली हुई अपनी ही ज़मीन,
लड़खड़ाकर गिरने का डर है।
लेकिन,
उम्मीद है तो जीवन है।

ज़िंदगी की भागदौड़,
आगे निकलने की है होड़।
नंबरों की रेस में,
पीछे रह जाने का डर है।
लेकिन,
उम्मीद है तो जीवन है।

भीड़ में अकेले हुए सब,
अपने-अपने में खोए हुए हैं।
आत्मीयता खो गई है,
रिश्ते खोखले हुए हैं।
ढूँढ़ते स्वयं ही स्वयं को,
खुद के खो जाने का डर है।
लेकिन,
उम्मीद है तो जीवन है।

स्मृति गुप्ता जबलपुर

एहसास जिंदगी का

मां ने जब पहली बार
मेरा बस्ता पकड़ कर
रास्ते भर मुझे पुचकारते पुचकारते
पहुंचाया था विद्यालय के द्वार तक
देख रही थी मैं तब उसे जाते हुए अपनी
अश्रुपूरित आंखों से,
पैर नहीं बढ़ रहे थे आगे
उसके भी मेरे बिना
देखा था उसने भी कई बार
पीछे मुड़ मुड़ कर मुझे
हो गया था एहसास तब
मुझे जिंदगी का।

जिंदगी का सफर
आगे बढ़ता गया
सुख दुख आंख मिचौनी करते रहे
मिला मित्रों का अनमोल साथ
हंसी ठहाकों का संसार
प्यारे गुलगोदने बच्चों का प्यार
उनकी मासूम निगाहें ,अबोध मुस्कान
करा गई थी मुझे
जिंदगी का एहसास ।

प्रकृति के रंगीन नजारे
सूरज चांद व सितारे
नील गगन व हरी भरी धरती
रुई के गोलों से उड़ते बादल
गिरती बर्फ,झरनों का संगीत
नदियों की कल कल ध्वनि
पंछियों के जीवनदायी गीत
सुख दुख के हिंडोले में
झूलते हुए निराश न होना
करा गया एहसास जिंदगी का।

धन दौलत के दरबार में
रिश्ते नातों का बिक जाना
पैसों की खातिर औलाद का
माता-पिता को छोड़कर
दूर बस जाना
उनसे विमुख हो जाना
बता गया नश्वर जगत का सार
करा गया सही मायनों में
जिंदगी का एहसास।

डॉ मंजुला पांडेय

तुम आना

तुम आना
मेरी अंतिम साँस
छूटने से पहले
मेरे प्राणों के रूठने से पहले।
जब स्मृतियों के दीये मद्धम पड़ने लगें,
और आँखों के कोरों पर
सपनों की राख जमने लगे,
तब तुम एक शीतल बयार बन कर आना।
मैं नहीं चाहती कि विदाई की उस घड़ी में
मेरे पास केवल एकांत का सन्नाटा हो,
या बीते हुए कल की कड़वी खरोंचें हों।
मैं चाहती हूँ—
तुम्हारी हथेलियों की गर्माहट,
तुम्हारी आवाज़ का वह परिचित सिरा,
जो मुझे भीड़ में भी ढूँढ लेता था।
सुनो,
सूरज के ढलने का समय नियत है,
पर मेरे मोह का धागा अब भी तुमसे जुड़ा है।
इससे पहले कि समय की धूल
मेरे चेहरे की पहचान मिटा दे,
और हृदय की धड़कनें अपना रास्ता भूल जाएँ...
तुम आना,
कि मैं मुस्कुरा कर विदा हो सकूँ।

रश्मि अभय

धरातल

संसार के धरातल पर
ऊँची-ऊँची इमारतें
लगता है
अकड़ा है जिस्म
कोट पैन्ट की क़ैद में
और कुछ झोपड़े
लगें जैसे नन्हे को
उमसती गर्मी में
पहना दिया हो इक झबला
और वो पगला
करके माँ से मनुहार
बस भाग पड़ेगा
खेत की ठंडी पगडंडियों के पार

बुशरा तबस्सुम

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

मैं लिखती हूँ

हाँ... मैं लिखती हूँ।
कभी मुस्कुराहट मेरी कलम का श्रृंगार बन जाती है,
तो कभी किसी अनजानी आँख का आँसू स्याही में घुल जाता है।
मैं शब्द नहीं लिखती,
मैं समय के चेहरे पढ़ती हूँ।
भीड़ में खड़े उस अकेले आदमी को,
बेटी की विदाई में पत्थर बने पिता को,
रात-रात भर जागती माँ को,
और चुप रहकर भी सब कुछ कहती स्त्री को...
मैं महसूस करती हूँ,
फिर लिखती हूँ।
क्योंकि कविता कल्पना से जन्म ले सकती है,
पर अमर सिर्फ़ अनुभूति से होती है।
जिसने जीवन की धूप को नंगे पाँव पार किया हो,
जिसने अपनों की ख़ामोशी में टूटते रिश्तों की आवाज़ सुनी हो,
जिसने अपने हिस्से के कुछ आँसू चुपचाप पी लिए हों...
वही जानता है,
शब्दों का वज़न स्याही से नहीं,
संवेदनाओं से तोला जाता है।
हाँ... मैंने भी ज़िंदगी को केवल देखा नहीं, जीया है।
कभी दर्द को होंठों की मुस्कान में छिपाया,
कभी टूटकर भी दूसरों को हौसला दिया।
शायद इसलिए मेरी कलम सिर्फ़ अक्षर नहीं लिखती, धड़कनें लिखती है।
मैं जब प्रेम लिखती हूँ,
तो उसमें प्रतीक्षा भी होती है।
जब विरह लिखती हूँ,
तो उसमें विश्वास भी होता है।
जब संघर्ष लिखती हूँ,
तो उसके अंत में एक दीपक अवश्य जलता है।
मैं हर कविता में अपने समय का सच,
अपने समाज का दर्द, और इंसानियत की बची हुई थोड़ी-सी रोशनी सहेज लेना चाहती हूँ।
हाँ... मैं लिखती हूँ।
क्योंकि मेरी कलम जानती है-घाव चाहे मेरे हों या किसी और के,
यदि वे हृदय तक पहुँचते हैं, तो कविता बन जाते हैं।
और जिस दिन मेरे शब्द किसी थके हुए मन को जीने की वजह दे देंगे...
उसी दिन समझूँगी,
मैंने कविता नहीं,
एक धड़कते हुए मन को आवाज़ दी है।

रेनू 'शब्दमुखर'

कभी-कभी

ऐसे नज़ारे दिखते कभी-कभी,
कुदरत का करिश्मा कभी-कभी।
ये आँखें थम सी जाती हैं,
जुबाँ भी हो जाती मौन कभी॥

कलम रुक जाती लिखते-लिखते,
ऐसा जादू होता कभी-कभी।
बयां न कर पाए कोई कवि,
लिख ना पाए लेखक कोई॥

दिल चाहे बस देखती रहूँ,
इस सुंदर दृश्य में खोई रहूँ।
ढल न जाए ये दिन कहीं,
मन डरता है कभी-कभी॥

पुष्पा अरविंद शर्मा

चाहत

चाहत इस संसार में, होती नहीं समाप्त।
चाहा सबको जोड़ना, अपनापन पर्याप्त।।

अपनापन पर्याप्त, साथ हों कभी न दूरी।
अच्छे हों संबंध, आस हो सबकी पूरी।

बना रहे सद्भाव, शब्द से करूँ न आहत।
आऊँ जग हित काम, प्रार्थना प्रभु वर चाहत।।

सर्जन सच्ची साधना, कर्म-धरा ईमान।
सत्य-पथिक की राह में, हो जीवन का गान।।

हो जीवन का गान, मान सच्चा ही पाऊँ।
चाहत ध्वज भू-शौर्य, वीरता नित गुण गाऊँ।।

पथ-महके सत्कर्म, प्रेम-धन शुभता अर्जन।
चरण-शरण दें मातु, शारदे शाश्वत सर्जन।।

अमितारवि दुबे
छत्तीसगढ़

मुकदमा

मुकदमा है क़लम पर आज स्याही की वकालत का
कि लोहा मानती है क्यूँ किसी काग़ज़ की ताक़त का

जहाँ वादें वफा इंसानियत के हो रहे सौदे
बिका है मोल माटी के वहां पुतला शराफत का

लिखा किस्मत में किसने आदमी के मौत की घड़ियाँ
मुकर्रर है तबाही, दिन मुकर्रर है कयामत का

करूँ क्या गुफ्तगू साहब दिवानों सा दिवारों से
मिली मदहोशियाँ मुझको नशा भी है मुहब्बत का

दिनकर राव
दिनकर

दीवार

है बीच की दीवार इसे जल्दी गिरा दो
हम आज भी दुश्मन तो नहीं इतना जता दो

अब और गुज़ारिश तो न हो पायेगी मुझ से
हो मुझ से ख़फ़ा आप मुझे साफ़ बता दो

हों लाख मुख़ालिफ़ वो कभी दोस्त रहे हैं
अच्छा तो यही है कि उन्हें जा के मिला दो

गर रात है बाक़ी वो अभी जल तो रही है
क्यूं वक़्त से पहले उसी शम्मा को बुझा दो

उस नर्म से बिस्तर पे उसे नींद न आयी
तुम जा के कोई शेर उसे मेरा सुना दो

तन्हा तो ज़माने के कभी काम ना आया
तुरबत पे लगी भीड़ ज़रा जा के हटा दो।

अनिल शर्मा "तन्हा"

तमन्ना

अच्छे से घर की तमन्ना,
अब पूरी हो गयी।

पूर्व से आती धूप और रोशनी,
बगीचे के लिए खुली जगह,
बड़ी-सी छत,
सूरज ढलने पर सिंदूरी हो गयी।

सजाया, संवारा, भीतर-बाहर,
पेड़-पौधे लगाए वहाँ पर।
खुशी मिली धीरे-धीरे।

जब भी छोड़कर जाओ कुछ महीने,
लौटकर आओ तो,
धूल की परतें
स्वागत करतीं,
मत जाया करो, मानों कहतीं।

अपना घर तो अपना होता है,
यह भाव कितना सुंदर होता है।
जहाँ शांति और प्रेम से
समय बीतता है,
कहीं और न जाना चाहता है।

चिड़िया भी घोंसले में
आतीं है दुबारा।
सच, अपना घर होता सबसे प्यारा।

डॉ. अमृता शुक्ला

चाहत

चाहतों का पिटारा बड़ा है,
होड़ के बाज़ार में मन खड़ा है।

सपने बड़े हैं, झोली खाली,
जगमगाती नहीं क्यों मेरी दिवाली?

अंतस में उलझनें बहुत हैं,
डोर कच्ची न हो, वहम है।

मझधार में फँसी है मेरी नैया,
प्रभु, पतवार थामो, हो तुम खिवैया।

पहुँचाओ किनारे जीवन की कश्ती,
इससे पहले मिट जाए मेरी हस्ती।

सारे न सही, कुछ ख़्वाब हों पूरे,
तमन्नाओं पर अभी मैं लगा लूँगी पहरे।

बड़ा ही मासूम-सा है मन मेरा,
जब जहाँ रोका, वहीं ठहरा।

स्मृति गुप्ता

अंदाज़

ज़िंदगी, तेरे भी अंदाज़ बड़े निराले हैं।
खुशी हो या ग़म, बड़े किस्मत वाले हैं।

बदल नहीं सकते रुख हवाओं का,
आख़िर उम्मीद भर थोड़े उजाले हैं।

घटा शबनम की हो या बरसात की,
रहे जो प्यासे, तो फिर वही प्याले हैं।

जाते लम्हों को सलाम कबूल हो,
फिर कहाँ ये लौटकर आने वाले हैं।

ग़मज़दा से कह दो, थोड़ा हँस ले,
खुशी भर लोग यहाँ मतवाले हैं।

खाली शज़र क्या हवा देगा, 'मनीष',
वक़्त रहते परिंदे यहाँ उड़ने वाले हैं।

मनीष कुमार पाटीदार

अगर मैं ख़ुद पर कविता लिखूँ, तो लिखूँगा...

चेहरे से खास नहीं हूँ,
अपनी सादगी, ईमानदारी से चमकता हूँ..
दिल साफ़ है मेरा,
जो मन में हो साफ़-साफ़ कह देता हूँ...

मैं आज के दौर का ज़रूर हूँ,
लेकिन मेरे समय के लोग
अपनी सादगी, ईमानदारी, लॉयल्टी, धैर्य और
संस्कार से जाने जाते हैं, यही हमारी पहचान है..

गर्व है मुझे मेरे माता-पिता की परवरिश पर..

मुझे छल कपट करना नहीं आता..
जिसे अपना कह दूँ,
*उसके लिए हमेशा वफ़ादार रहता हूँ...!

सुरेन्द्र पाल सिंह (बिट्टू)
एल्डरमैन
नगर पालिका परिषद्
बालाघाट (मध्यप्रदेश)

किताब

किताबों के पन्ने क्या खुले,
संग खिड़की-दरवाज़े भी खुले।
यादों का पन्ना भी पलटा,
मन चंचल भी पीछे पलटा।।

बचपन और किताबों का साथ,
होता है इतना गहरा।
प्यारी-सी यादें होती हैं,
संग जीवन भर जो चलती हैं।।

मोरपंख की डंडी भी,
किताबों की शोभा बढ़ाती थी।
चाकों के टुकड़ों के बदले,
सखियों से ही मिल जाती थी।।

ज़्यादा विद्या की चाहत में,
उसकी भी कलम रख जाती थी।
और सावन के महीने में तो,
रेशम की टिक्की भी रख जाती थी।।

किसी प्रश्न में सही लगाकर,
आई.एम.पी. भी लिख जाता था।
किसी ज़रूरी लाइन के नीचे,
डंडा भी खिंच जाता था।।

पूरे पेजों को इकट्ठा कर,
फिर नाम भी लिख जाता था।
चोरी होने के डर से तो,
गुप्त निशान भी लग जाता था।।

किताबों के पन्ने जो खुले,
संग खिड़की-दरवाज़े भी खुले।।

साधना छिरोल्या
दमोह (म.प्र.)

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

तमन्ना

सिर्फ़ एक बार सारी परेशानी, जिम्मेदारी भूलकर,
अपने लिए कुछ पल जी लें।

बहुत जी लिए औरों के लिए,
अपने लिए जी लें।

देखो न, आईना भी असमंजस में है—
पहचान बताऊँ, सच दिखाऊँ
या मुगालते में जीने दूँ?

पहचान ढूँढ़ती आँखें
तमन्नाओं के जंगल में भटकते-भटकते थक चुकी हैं।

खुद के संग समय बिताए
ज़माना गुज़र चुका।

अब बस यही चाहत शेष है—
जिम्मेदारी की चादर जर्जर होने से पहले
सभी चाहतों को विराम दे दें।

नहीं कहेंगे, थक गए हैं,
बस थोड़ा-सा ठहर गए हैं।

दूर तलक देख पाते नहीं,
समय की धुंध गहरी है।

आओ प्रिय, कुछ पल साथ जी लें।
यादों की भीड़ में
कुछ मीठी यादें और जोड़ लें।

हाथ पकड़कर चलो।
ये रेतीला किनारा कितना अलग है न!

एक तरफ समुद्र की विशाल जलराशि,
दूसरी ओर घना जंगल।

हमारे मन की तरह
विरोधाभास है न यहाँ?

चाहत, तमन्ना के अनेक मोड़ों से गुज़रते
जीवन के काफ़िले,
देखो न, आख़िरी पड़ाव तक आ ही गए हैं।

चलो, वापस चलें।
अभी तो जिम्मेदारी निभानी है।

नमिता दुबे
'मिशा'

उड़ान

उड़ान परों की नहीं
हौसलों की पहचान है
गिर कर उठने वाला ही
होता बहादुर इंसान है

पंखों में जब पूरा विश्वास हो
मन में आशा की उजास हो
हर सीमा तब छोटी लगती
जब सपनों का आकाश हो

चाहे बादल रोकें राहें
चाहे आंधी लाख सताए
दृढ़ संकल्पों की ज्वाला को
कोई नहीं पर बुझा पाए

उड़ान वहीं से शुरू हुई
जहां डरने सर झुकाया था
जीत उसी ने पाई आखिर
जिसे खुद को आजमाया था

चलो बढ़े अब लक्ष्य की ओर
मन में बस नव उत्साह लिए
सपनों के विस्तृत अंबर में
अपनी अद्भुत उड़ान लिए

रत्ना पाण्डेय
रायपुर, छत्तीसगढ़

अनुभूति

संवेदनशील मन में होता, अनुभूति का अहसास।
दुःख में नयन नीर बहे, सुख में हास-परिहास।

स्पर्श संवेदना का सूचक, मिटे पीड़ित परिताप।
अनुभूति का प्रकटीकरण, आश्वस्ति का माप।।

अनुभूति अंतर जगे, इसका अव्यक्त संसार।
करुण हृदय और संवेदना,
हैं दो मूल आधार।।

क्षीण हो रही संवेदना, हृदय हो रहा कठोर।
अनुभूति पर घिर रहा, अंधियारा चहुं ओर।।

अनुभूति व्यक्त करना, सिर्फ मानव के पास।
देख मानवी निर्ममता,
मन रहता सदा उदास।।

मोहन जोशी 'पीयूष '
इंदौर.b

पूजा का प्रकार

स्वार्थ बीज कैसे बोए,
पेड़ कटे फूल रोए,
प्रकृति की वेदना से,
दुःख पारावार है।

धुँआ-धुँआ चारों ओर,
ध्वनि प्रदूषण शोर,
घुटन-घुटन यहाँ,
मचा हाहाकार है।

फले फूले हरे वन,
पर्वतों का न खनन,
नदियों की स्वच्छ धार,
जीने का आधार है।

अंबर से धरातल,
शुद्ध वायु शुद्ध जल,
रक्षा पर्यावरण की,
पूजा का प्रकार है।

मालिनी त्रिवेदी पाठक
वडोदरा गुजरात

जीवन चक्र

भागते जा रहे हैं किसी दौड़ में
मन में उलझन निराली थी,
अकुलाहट भी भारी थी।
समझ ना आया उसका तोड़।
प्रश्नों की गांठे अनसुलझी है,
मन के व्याकुल तृषित कलश में।
बहुत सोचा पर समझ ना पाया,
कठिन प्रतिस्पर्धा में क्यों भागते जा रहे हैं लोग।
मैं पीछे भाग रहा उन्हें बहुत समझा रहा,
जो कांटे तुम्हें चुभन दे रहे उन्हें निकाल फेंको बाहर,
अरे डरो नहीं घबराओ नहीं यह वृद्धावस्था क्या होती है?
परिपक्वता तो तुम्हारा अनुभव है श्रृंगार है,
जीवन पर्यंत कर्मों विकास का अधिकार है।
व्यथित न हो उत्साहित ना हो अनाहित सृष्टि की कृति से,
ना भूल तू यह अगली पीढ़ी ही है तेरा वेश,
संस्कार संपन्न तेरा परिचय होगा उनके हर कर्मों में शेष।
ना चाहे तुम्हें आज तुम्हारे संसार में,
ना हो निराश, ऐसी बातों के भय से,
आओ हम सब मिलजुल करकर्म करें,
ना भूलो एकता में बल है, दौड़ते भागने मुंह छुपाने में नहीं दम है।

नीरजा वर्मा
रायपुर

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

मुलाकात

दिल ने दिल को याद किया
सोते जज़्बातों ने फरियाद किया।
ईश्वर ने तमन्ना को पूरी की,,,

बरसों से सूखे पड़े शब्दों में
अचानक बारिश हो गई
जब तुम्हारी आवाज़ ने
मेरा नाम लिया

वक्त ठहर गया था
घड़ी की सुई भी शायद
एक पल के लिए
साँस लेना भूल गई थी

न पूछा कि कहाँ थे इतने दिन
न शिकायतों की कोई फेहरिस्त खुली
बस आँखें मिलीं
और सारी दूरियाँ
एक पल में गल गईं

मुलाकात ऐसी हो
जैसे बरसों बाद मिला कोई अपना
शब्द कम पड़ जाएँ
और खामोशी सब कह जाए

चाय की भाप में
तेरा चेहरा तैर रहा था
और मैं
उसी भाप में
अपनी सारी तन्हाई
घोल कर पी गया

जाते-जाते तुमने कहा
"फिर मिलेंगे"
और मैं जान गया
कि अब इंतज़ार भी
इतना बुरा नहीं लगेगा

क्योंकि कुछ मुलाकातें
दिल में नहीं
रूह में उतर जाती हैं

मंजू सरावगी मंजरी
रायपुर छत्तीसगढ़

बैलगाड़ी

जीवन चक्र भी
बदल गया है,
पहले गति
बैलगाड़ी की मानिंद
धीमी जरूर थी,
लेकिन
पहिया थमता था
नैतिकता,
मर्यादा,
सुचिता की मंजिल पर पहुँचकर,
आज
जीवन में आपाधापी है
चाहे हमने
चंद मिनटों में
दुनिया नापी है,

लेकिन
इस गति ने हर इंसान को
उपभोक्तावादी
स्वच्छंदचारी
बनाया है
फलस्वरूप
नैतिकता,
मर्यादा,
सुचिता
का हुआ सफाया है,

सोचता हूँ,
काल की टंकार से
बैलों के गले की
घंटी मधुर थी,
जहाँ जीवन सहज-सरल था
चाहे मंजिल दूर थी।

प्रदीप कुमार अरोरा

कविता

बस स्टैण्ड पर खड़ी वह लड़की
अपने में ही मग्न कुछ सोचती हुई लड़की
अब तो रोजाना ही दिखने लगी थी
बस स्टैण्ड पर खड़ी वह लड़की
दिन ब दिन कुछ सहज हो
इधर-उधर देखने लगी थी वह लड़की
फिर एक दिन मोबाइल पर बात करते हुए
हँस रही थी वह लड़की
अब तो अक्सर ही मोबाइल पर हँसती-बतियाती
बस स्टैण्ड पर खड़ी वह लड़की
और एक दिन मुँह को स्कार्फ से ढ़के
किसी का इंतजार करती लगी वह लड़की
कुछ देर बाद एक लड़के के साथ बाइक पर बैठकर
फुर्र हो गई वह लड़की
अब तो तकरीबन रोज ही उस लड़के के साथ
बाइक पर बैठकर जाने लगी वह लड़की
और कुछ दिनों बाद
आँखों से टपकते आंसुओं को
रूमाल से पोंछती
डरी-सहमी असहाय सी
उसी बस स्टैण्ड पर खड़ी थी वह लड़की
तब लगा कि
समय के बहाव में बहकर
एक स्वार्थी के हाथों
आज फिर छली गयी
एक सीधी-साधी लड़की

भागचंद गुर्जर

अनुप्रासिक दोहे

काली
काली काल्यै कामदा,कपालिनी हैं नाम।
काल कृशांगी कालिका,शत-शत नमन प्रणाम।।

चंदा
चंदा तेरी चाँदनी,चमक रही चहुँओर।
देख चमकती चाँदनी,चकित हुआ चितचोर।।

मोहन
माला मनका फेरती,जपती मोहन नाम।
मुरली धुन मोहित करे, गूँजें आठो याम।।

माला
माला लेकर मन जपे,माधव मधुरिम नाम।
मंगलमय जीवन बनें, मिले सहज विश्राम।।

महिमा
मोहन महिमा मापना,नहीं मनुज के हाथ।
ममता माया मोह सब,मिटें नाम के साथ।।

डॉ. सरोज दुबे 'विधा'

पश्चाताप

जिंदगी की किताब के पन्ने पलटती हूं
स्वयं को विचारों के भंवर में डूबता इतराता पाती हूं
लाख पीछा छुड़ाना चाहूं,स्वयं को कठघरे में खड़ा पाती हूं

जीवन में हम कहां सबको खुश रख पाते हैं
अपनी अनकही वेदना से खुद को कमजोर बनाते हैं

कौन देख पाता है इस अंतर्द्वंद को
निरंतर हारते,लड़ते,बढ़ते इस जीवन को

कटु वाणी,कभी व्यंग बाण कर जाते हृदय तार तार
न जाने अनचाहे ही ये अवसर आए कितने बार

बात जवान से तीर कमान से सर्र से निकल जाए
कितनी भी कोशिश कर लें पर लौट ना वापस आएं

वक्त रहते गर कर लें अपनी भूल सुधार
क्रोध का ज्वार उतरते ही पछतावा ना हो बार-बार।

एडवोकेट राधा सोहाने,
रायपुर

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

आत्मबोध

दर्पण के उस पार न जाने,
कौन-सा निस्पंद आलोक;
जहाँ आत्मा निज अनन्त स्वरूप का,
करती दिव्य संयोग।

प्रतिबिंब वहाँ मुखाकृति का नहीं,
अंत:करण का अभिलेख;
प्रत्येक दृष्टि नवदीप जला दे,
जागे आत्म-विवेक।

अहंकार की अभेद्य प्राचीरें,
क्षण में हों धूलिसात;
सत्य-निर्झर की विमल धार से,
मिट जाएँ सब आघात।

मिथ्यात्व की समस्त छायाएँ,
स्वत: विलय को जाएँ;
विवेक-प्रभाकर की स्वर्ण-किरणें,
अंतराकाश नहलाएँ।

दर्पण के उस पार काल भी,
द्रष्टा ऋषि-सा मौन;
पारिजात-सी स्मृतियाँ झरतीं,
महके चेतन-कानन।

जो उस पार स्वयं को जाने,
पाए जीवन-ज्ञान;
प्रत्येक श्वास स्वयं बन जाए,
ब्रह्मानुभूति-गान।

शून्य में स्वस्ति के प्रथम स्वर,
छेड़ें गूढ़ अनुराग;
प्रत्येक नि:श्वास अनन्त-वीणा पर,
बन जाए अमर राग।

दर्पण के उस पार तो,
मेरा अनन्त था प्रतीक्षारत;
वहाँ पहुँचकर ज्ञात हुआ—
आत्मान्वेषण ही था अनवरत।

जिसकी दिव्य ज्योति में,
जीव, जगत, सत् विलीन;
एकरस हो मौन गाए—
हो जाए आत्मलीन।

करुणा अमृतधार बन,
स्निग्ध करे हर प्राण;
श्रद्धा शाश्वत वट बने,
दे चिर-अभय वरदान।

दर्पण के उस पार जहाँ,
मिट जाए अहं-प्राचीर;
आत्मदीप स्वयं जल उठे,
जागे चैतन्य गंभीर।

दर्पण के उस पार अंतत:,
न कोई प्रश्न रहा, न उत्तर शेष;
आत्मा और सत्य का,
अद्वैत ही रह गया शेष।

सिद्धि बृज रतले
दमोह मध्यप्रदेश

हृदय के उद्गार

भावना मन की समेटे
हृदय के उद्गार लिखती,
साध मन की सब बटोरे
आज मैं शृंगार लिखती
आज मैं- -

काँच से टूटे पड़े ये
स्वप्न सारे बिन तुम्हारे ,
तृषित जीवन में घिरे घन
विरह की बरसात लिखती
आज मैं- -

पुष्पप्रिय मन व्यथित तन
रजनी दिवस परिणय मिलन,
नव अरुण सा साथ अपना
क्षणिक था सब स्वप्न लिखती
आज मैं- -

नूपुरों का मूक छूना
बिन तुम्हारे विश्व सूना,
पुलक-पंखी विरह पर उड़
मिलन और अभिसार लिखती
आज मैं - -

स्मृति पटल पर कर रही मैं
स्वयं निज का रूप अंकन,
राग छलकाती हुई मैं
विरह में मधुमास लिखती
आज मैं,..

सरोजिनी चौधरी

पावस प्रसंग

चाह जिसकी थी वहीं अब,
दिन सुहाने आ गए।
मेघ काले देख लो,
नीले गगन पर छा गए।

पड़ रहीं रिमझिम फुहारें,
जो भिगोएँ तन व मन।
साथ उनका दे रहा है,
मंद गति चलता पवन।

पात पेड़ों के नहाए,
से सभी लगने लगे।
बीज खेतों में पड़े जो,
सुप्त थे जगने लगे।

पंख फैलाए मयूरा,
नाचता अब बाग में।
अब नहीं कलियाँ झुलसतीं,
इस गगन के आग में।

हर कृषक के होठ पर अब,
तो मधुर मुस्कान है।
अब नही चिंतित दिखें वे,
जान आयी जान है।

चल पड़े हल- बैल लेकर,
अब किसानी के लिए।
देखकर मेघा गगन,
भरपूर पानी के लिए।

तृप्त तो धरती नहीं पर,
ताप कुछ है कम हुआ।
मेघ की ठंडी फुहारें,
ने उसे जब से छुआ।

दृश्य पावस के पुराने ,
याद फिर से आ गए।
देखिये नीले गगन पर,
मेघ काले छा गए।

।। राजेंद्र रायपुरी।।

सीख

रिश्ता तब मजबूत हो,जब पावनता संग।
अगर निष्कपट आदमी,तो खिलते हैं रंग।।

सच्चाई के संग में,बिखरे सदा सुगंध।
रहे निष्कलुष आदमी,तो अटूट संबंध।।

बंधन में दृढ़ता रहे,तभी फलित हो प्यार।
वरना नित होती रहे,अर्थहीन तकरार।।

गाँठ बाँध मत खोलना,तब ही पलता हर्ष।
दुर्बल मन से ज़िन्दगी,सहे नहीं संघर्ष।।

जीवन है अनमोल तब,संग अगर विश्वास ।
कभी न प्रिय की तोड़ना,थोड़ा देकर आस।।

रहे भरोसा यार पर,तब बनता वह ख़ास।
रखना नेहिल भाल नित,और सुखद अहसास।।

धोखा देना पाप है,रहना इससे दूर।
वरना छिनना तय समझ,जीवन का सब नूर।।

करना नहीं फरेब तुम,यह होता अभिशाप।
सदा हेयता जानना,और निम्नता माप।।

प्रोफेसर शरद नारायण खरे

"योग"

'एकाकार' न हो पाए तो संधि और विस्तार व्यर्थ है।
'निग्रह' नहीं इन्द्रियों का तो, ये सज-धज, श्रृंगार व्यर्थ है।
भोग, विलास, तृषा, लिप्सा से, विचलन के इस मुक्ति मार्ग पर,
चलो, रहो नीरोग नहीं तो, पड़े रहो बीमार व्यर्थ है।

तप, संकल्प, साधना है ये, धन अर्जन उद्योग नहीं है।
विविध हस्त मुद्रा,कटि ग्रीवा, पग संचालन योग नहीं है।

रत्नदीप खरे,
इंदौर (म.प्र.)

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

सृजक-सृजन समीक्षा

रविवारिय केंद्रीय रचनाकार विशेषांक

आज अन्तरा शब्दशक्ति के पटल पर आ. प्रणव राज,-कैमूर, बिहार का परिचय एवं उनकी पाँच रचनाएँ पाठकों की समीक्षा एवं विचारार्थ प्रस्तुत हैं।

सरल, सहज और भावप्रधान भाषा में लिखी गई इन रचनाओं में सम्भावनाएं , संस्कार, बदलते सामाजिक मूल्य, तकनीक का प्रभाव, रिश्तों की गरमाहट, प्रकृति, जीवन-दर्शन तथा नाबाई का सकारात्मक सोच का सुंदर समन्वय देखने को मिलता है।

आप सभी सुधी पाठकों एवं साहित्यकारों से विनम्र अनुरोध है कि रचनाओं का गंभीरतापूर्वक अध्ययन कर अपनी निष्पक्ष, सारगर्भित एवं रचनात्मक समीक्षा अवश्य प्रदान करें। आपके सुझाव और मार्गदर्शन किसी भी रचनाकार के सृजन-पथ को नई दिशा और ऊर्जा प्रदान करते हैं।

प्रस्तुतकर्ता डॉ. प्रीति समकित सुराना
संस्थापक एवं संपादक

अन्तरा शब्दशक्ति

रचनाकार का परिचय

नाम : प्रणव राज
जन्मतिथि : 20/12/2009
माता-पिता : श्री राजीव कुमार तिवारी,श्रीमती स्मिता तिवारी
शिक्षा : मैट्रिकुलेशन, फिलहाल ग्यारहवीं में
लेखन-विधा : कविता, कहानी, ग़ज़ल, व्यंग
भाषाएं : हिंदी, अंग्रेजी एवं भाजपुरी

प्रकाशित कृतियां देश भर की 30 से ज्यादा पत्र-पत्रिकाओं में कई रचनाओं का प्रकाशन

सम्मान विभिन्न पत्रिकाओं से प्रदान सम्मान पत्र

मोबाइल : 7061181275

ई-मेल : smita.t1987@gmail.com

रचनाकार का आत्मकथ्यर एवं परिचय

मेरा जन्म **20 दिसंबर 2009** को बिहार के रोहतास जिले के एक छोटे से शहर सासाराम में हुआ है। जो कि मेरा मामा गांव है। मेरे पिता का नाम **श्री राजीव कुमार तिवारी** एवं माता का नाम **श्रीमती स्मिता कुमारी** है। मेरे गांव का नाम अंधार है जो कि रोहतास में ही बसा है। मेरे पिता के व्यवसाय के कारण मेरा बचपन पटना के एक मोहल्ले में बीता और प्राथमिक शिक्षा पटना के ही भारत पब्लिक स्कूल में पूरी हुई। वहां करीब पांच छः साल रहने के बाद। मैं अपने माता पिता के साथ बिहार के औरंगाबाद चला गया। फिलहाल मैं कैमूर जिले के मोहनिया शहर में हूं। मोहनिया के ही डी. ए. वी पब्लिक स्कूल से मैने मैट्रिक की डिग्री हासिल की। मैं फिलहाल ग्यारहवीं में हूं और अपनी पढ़ाई के साथ साथ लेखन के कार्य से भी जुड़ा हूं। सातवीं कक्षा में मेरे अंदर लेखन के प्रति रुचि बड़ी और साहित्य को समझने का नया नजरिया भी प्राप्त हुआ। मैने अंग्रेजी के लेखक रसकिन बॉन्ड को अपना आदर्श माना और लिखना प्रारंभ किया। शुरुवात में मैने पच्चीस कहानियां लिखी जिसमें से एक कहानी केरला के एक बाल पत्रिका "**द चिल्ड्रेन मैगजीन**" में प्रकाशित हुई। उसके बाद अंग्रेजी के बड़े पत्रिकाओं में कविता प्रकाशित होने लगी। इसे के दौरान मेरा मनोबल बढ़ाने के लिए मेरे पुस्तकालय के अध्यक्ष "**श्री जयदेव पाठक**" जी ने काफी योगदान दिया और मेरी रुचि हिंदी साहित्य और काव्य रचनाओं के तरफ आकर्षित किया। मेरे अंग्रेजी के शिक्षकों ने भी मेरा बहुत सहयोग किया है। आज के समय में मेरी रचनाएं 30 से ज्यादा पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी है। जिसमें से हिंदी, अंग्रेजी और भोजपुरी की पत्रिकाएं हैं।

पत्रिकाओं की सूची:

इस सूची को आगे बढ़ाने की मेरी कोशिश जारी है।

1. PCM The children's magazine(English)
2. CBT children's world magazine(English)
3. Kloud9 magazine(English)
4. Bookosmia.Com (English)
5. Ghudsavaar (hindi)
6. Delhi University's वाग्मिता पत्रिका
7. Prabhat khabar hindi newspaper
8. Nai goonj online magazine(hindi)
9. Sahitynama (hindi)
10. Sahity kunj (hindi)
11. The children's newspaper(English)
12. Anubhuti(hindi)
13. मिशन शिक्षण संवाद (Hindi)
14. जयदीप पत्रिका (Hindi)
15. हिंदी बोल इंडिया(Hindi)
16. एकलव्यंम फाउंडेशन(Hindi)
17. नवोदित प्रवाह(Hindi)
18. इंदौर समाचार (Hindi कॉलम)
19. बरोह पत्रिका(Hindi)
20. Prizedale times(English)
21. दैनिक निर्माण(Hindi)
22. अमर उजाला काव्य(Hindi)
23. देश रोजाना अखबार (Hindi)
24. Magic pot Magazine (English)
25. अंतरा शब्दशक्ति (Hindi)
26. किलोल मासिक पत्रिका(Hindi)
27. चहल पहल पत्रिका (Hindi)
28. Robin age newspaper(English)
29. Student Edge newspaper (English)
30. दैनिक विनय उजाला अखबार (Hindi)
31. अभिनव बालमन राष्ट्रीय पत्रिका (Hindi)
32. मैना पत्रिका (भोजपुरी)
33. टाबर टोली अखबार (हिंदी)
34. दिया बाती पत्रिका (भोजपुरी)
35. जग प्रेरणा दैनिक अखबार (हिंदी)

रचनाएं:

1. कुछ अच्छा नहीं

तुम्हे खो देना तकदीर के लिए अच्छा नहीं,
तुम्हे बस यादों में जिंदा रखना अच्छा नहीं।

हमारी कहानी अभी पूरी नहीं हुई है,
इसे अधूरा छोड़ देना अच्छा नहीं,

मुझे हमेशा समझाते हैं लोग,
तुम्हारी वापसी के लिए तरसना अच्छा नही,

मुझे गलत कभी मत समझना तुम,
इस नासमझ को गलत समझना अच्छा नहीं,

मैं हर रात अपने ही घर को जाता हूं,
अब तुम्हारी दहलीज पर माथा पटकना अच्छा नहीं,

बेपरवाह होकर प्रणव चला है उस ओर,
तुम्हारे साथ अब चलना अच्छा नहीं।

2. मौन हूं मैं भी

एकदम से,
खिड़की पे खट- खट हुई,
भाग के गया,
पल्ले खोले,
पर, वहां हवाओं के सिवा कुछ नहीं,
फिर दरवाजे पर आहट हुई,
दौड़ के गया,
दरवाजा खोला,
ओट से झांका पर कोई नहीं,
एक आस थी पहले,
तो दौड़ जाता था,
पर अब सब वहम के समान है,
और, अब न तो आहट होती है,
न ही दस्तक किसी की,
न तो कभी खट- खट सुनी मेरे कानों ने,
न ही दरवाजे के नीचे से खत के सरकने की आवाज़,
खिड़की और दरवाज़े की तरह,
मैं भी मौन हूं।

3. ग़ज़ल

पेट दिया है भगवान ने चाहिए कोई खिलाने वाला,
यादों से नफरत है मुझे चाहिए कोई मिटाने वाला।।
साथ चलने का वादा हुआ था हम दोनों का,
साथ तुमने छोड़ दिया चाहिए कोई निभाने वाला।
जो शिकायत होगी उसे सामने से कहेंगे,
जो पीठ पीछे तुमने कहा चाहिए कोई अनसुना कराने वाला।
एक दूसरे को जतन से रखेंगे बुरा न करेंगे कभी,
जो तुमने भी खंजर मारा चाहिए कोई दवा लगाने वाला।
लिखा है जो किस्मत में वही होता है सबके साथ,
मेरी किस्मत में बुरा लिखा है चाहिए कोई मिटाने वाला।
जीवन के अंधेरे में उजाला करना होगा मुझे,
माचिस है मेरे पास बस चाहिए कोई जलाने वाला।

4. पापा को आराम चाहिए

सुबह तड़के से उठ जाते हैं,
नाश्ता भी नहीं खाते हैं,
दिन भर लैपटॉप पर खट खट करते-करते,
रात को थकान से टूट जाते हैं।

रविवार के दिन भी काम निपटाने में बच्चों के साथ नहीं खेलते हैं,
रात दिन सुबह शाम बॉस के नखरे झेलते हैं,
नींद न पूरी होती तो,
कुर्सी पर बैठे-बैठे झपकियां लेते हैं।

रोजमर्रा की कशमकश से दूर जाने का,
परिवार के संग बैठकर खाने का,
मन तो बहुत करता होगा उनका,
शारीरिक और मानसिक सुख पाने का।

माना, कि काम करने से पैसे आते हैं,
अगर पैसे कमाने में पापा अंदर से टूट जाते हैं,
तो लात मारो ऐसे पैसे को,
जिसके लिए पापा हमसे दूर जाते हैं।
पापा को थोड़ा आराम चाहिए,
दिन भर की भाग दौड़ से विश्राम चाहिए,
जीवन भर दौड़ते हैं वो,
उन्हें थोड़ा सा विराम चाहिए।

5. इंसानों को देखा है

मैने जानवरों को ठंड से कांपते देखा है,
कुचल दिए जाते हैं सड़कों पर,
उन्हें रोते, बिलखते,आंसू बहाते देखा है,
उनके दुख को नजर अंदाज करके,
इंसानों को चैन से सोते देखा है,
जंगलों में आग लगते,
पेड़ों को कटते देखा है,
पर, भरपूर ऑक्सीजन लेकर,
इंसानों को सांस भरते देखा है,
रोड पर कचरा,
दीवारों पर थूकते देखा है,
"एक के सफाई करने से क्या होगा?" कहकर,
इंसानों को रास्ता नापते देखा है,
कईयों को डूबते देखा है, मदद करने के बजाय,
हैवानों को फोटो, वीडियो बनाते देखा है,
नर्क मैने कहीं देखा नहीं, पर, नर्क के शैतानों को रोड पर घूमते, टहलते देखा है।

प्रणव राज,
कैमूर, बिहार

धन्यवाद

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

छोटा बहादुर

एक समय की बात है, एक छोटे से गाँव में रामू नाम का एक लड़का रहता था। वह अपनी उम्र के बच्चों से ज्यादा समझदार और बहादुर था। एक दिन वह अपने दोस्त सोनू के साथ नदी के किनारे खेल रहा था। अचानक सोनू का पैर फिसला और वह गहरे पानी में जा गिरा। सोनू को तैरना नहीं आता था और वह मदद के लिए चिल्लाने लगा।

रामू के पास डरने का समय नहीं था। उसे पता था कि अगर उसने तुरंत कुछ नहीं किया, तो उसका दोस्त डूब जाएगा। उसने बिना सोचे-समझे नदी में छलांग लगा दी। पानी का बहाव तेज था, लेकिन रामू ने साहस नहीं खोया।

उसने संघर्ष किया, सोनू को कसकर पकड़ा और किनारे की तरफ तैरने लगा। काफी मेहनत के बाद, वह सोनू को सकुशल किनारे पर ले आया। गाँव वाले यह देखकर हैरान रह गए और रामू की बहादुरी की बहुत प्रशंसा की।

इस कहानी से यह शिक्षा मिलती है कि सच्ची वीरता शारीरिक शक्ति में नहीं, बल्कि सही समय पर मुसीबत का सामना करने के साहस में है। हर किसी को निडर और मददगार बनना चाहिए।

संगीता गुप्ता मंडला

एक धर्मयुद्ध

भगवान श्रीकृष्ण ने युद्ध के मैदान में गीता का
संदेश देकर सिखाया कि सत्य और शांति की स्थापना
के लिए अत्याचारियों का अंत करना आवश्यक है
उसी तरह भारत की राष्ट्रीय नीति का सार भी
यही है कि जो लोग देश की सुरक्षा के लिए
घातक और अत्याचारी का व्यवहार रखते हैं
उनका अंत करना धर्म का पालन के बराबर है
जो धर्म की रक्षा करता है,तो फिर धर्म भी उसकी रक्षा करता है
इसलिए भारतीय सेना का कहना है कि
ऑपरेशन सिंदूर एक धर्मयुद्ध था,न कि बलजोरी युद्ध
क्योंकि इसमें नैतिकता, सिद्धांत,और तकनीक का
अद्भुत समन्वय देखने को मिला,जो प्रशंसनीय था
अभियान के दौरान सेना ने किसी निर्दोष को जानबूझकर
कोई हानि या नुकसान नहीं पहुंचाया गया था
और न ही नमाज या प्रार्थना के समय पर कोई
हमला या मिसाइल छोड़ा गया जो घातक हो
यह हमारे भारतीय संस्कार का चलन और प्रतीक है
ऑपरेशन सिंदूर न केवल बदले की लड़ाई थी
बल्कि भारत देश के आत्मगौरव और स्वाभिमान
की एक मर्यादित धर्मयुद्ध था, जो सदियों तक
देश वाशी और साथ ही विश्व भी याद करता रहेगा।

पुष्पा सिन्हा

बदलाव

जब से होश संभाला है,
मुझे हमेशा बदलाव से डर लगा है।

कैसे मान लूँ कि जिस घर को मैं अपना संसार कहता हूँ,
एक दिन वहीं खड़ा होकर खुद को अजनबी महसूस करूँगा।

हम चाहे मानें या न मानें,
दिल के किसी कोने में यह सच हमेशा रहता है
कि माँ और पापा हमेशा यूँ ही खुश और स्वस्थ नहीं रहेंगे।

तो क्या अपने सपनों की राह चुनना स्वार्थ है,
या फिर उनकी राह में ही अपनी मंज़िल ढूँढ़ लेना सही है?

क्योंकि मेरी ज़िंदगी तो अभी शुरू ही हुई है,
और उनकी ज़िंदगी अपने दूसरे पड़ाव में पहुँच चुकी है।

अगर अपनी उम्र का कुछ हिस्सा उन्हें दे पाता,
तो आधी ज़िंदगी देने में भी
मैं एक पल की देर न करता।

अपनी नई पहचान बनाने के लिए
मुझे घर से दूर जाना पड़ता है,
लेकिन पीछे उन्हीं लोगों को छोड़ जाता हूँ,
जिन्होंने मुझे सबसे पहली पहचान दी थी।

सम्यक कोचर, कटंगी

कर्तव्य पथ

कर्तव्य पथ पर चलकर,
सदा कर्म करें निष्काम।
नहीं हानि लाभ की चिंता
फल की आशा त्याग।

श्रम बिना जीवन निरर्थक
बढे आलस्य और प्रमाद।
नियत कर्म करते रहें
मिटे शोक और विषाद।

जब कर्म को पूजा बनाया
लेकर कृष्ण का आधार।
माधव ने संभाला युद्ध में
अर्जुन के सारथी का भार।

कर्म कोई छोटा नहीं
सब जाति धर्म समान।
सहज कर्म करते हुए
कबीर बने भक्त महान।

चंद्रकांता अग्रवाल, रायपुर

"जाने कितने प्रकल्पों में"

थोड़ा सच में, थोड़ा गीत में,
थोड़ा कथाओं गल्पों में,
बांट दिया है हमने खुद को
जाने कितने प्रकल्पों में।

जाने कैसे कैसे सपने
मन अपना यह बोता है।
बजे कहीं भी शहनाई तो
यह भी हर्षित होता है।

असमंजस में नहीं रहा यह
जीया सदा विकल्पों में।

सोचा नहीं पराया अपना
मिला जहाँ दुख बाँट लिया।
मन ने अगर नकारा बोला
तो उसको भी डांट दिया।

सर्व भवन्तु सुखिना की ही
आहुति है संकल्पों में।

दुर्लभ देह मिलेगी अब कब
यह मानव की संज्ञा वाली।
यही सोच कर सरका दी
अपने भोजन की थाली।

ऐसे जीवित जन हैं अब भी
मरे नहीं जो कल्पों में।

**हृदयेश भारद्वाज
रायपुर (छ. ग.)**

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

जलवा

मां बाप थे तो जलवा था सब पर रुआब का,
अब नाम रह गया है यहाँ बस नवाब का।

इतना था जिंदगी का तजुर्बा उन्हें तभी,
सानी नहीं है कोई भी उनके हिसाब का।

वो खुशनुमा हवाएं बवंडर क्यों बन गई,
ये रंग लाल क्यों है झेलम चिनाब का।

देती रही मैं पानी मगर तेरी याद में,
पनपा नहीं अभी तक ये पौधा गुलाब का ।।

तुमने सलाम भेजा न ही ख़त कोई मुझे,
देखूंगी कब तलक मैं यूं रस्ता जवाब का।

तपता सा रेजगार, मुहब्बत का ये जहां,
कैसे करूं भरोसा कहो मैं सराब का।

आशिक नए नए हुए हर इक सदी में पर,
कुछ फ़र्क हि पड़ा न किसी इंकलाब का।

हैं लरज़िशें लबों पे, नज़र में शरार है,
हालत बता रही है हरिक ग़म जनाब का।

सीने में मेरे दिल है ,वो तेरे नहीं नहीं,
कैसे मिले ज़वाब के मेरे ज़वाब का।

रौशन तो दोनों ही हैं मगर आशिकों में यां,
चर्चा है बस क़मर का न की माहताब का।

बदली सी है क़मर यां कहीं धूप रेशमी,
जलवा-ए-हुस्न है ये हमारे शबाब का।

राजश्री तिवारी पांडे क़मर

कविता

चुप हो जाना और चुप करा दिया जाना
बहुत पीड़ादायी होता है।

कितनी शोभती है वह उन्मुक्त परी,
जो घर-आँगन में चहचहाती है।

जिसके खुले केश हवाओं से करते हैं
अठखेलियाँ,
वह पल में नाप जाती है कितनी गलियाँ।

वह खिलखिलाती है, तो खिल जाती हैं
कलियाँ,
वह भागती है, तो सिमट जाती हैं वल्लरियाँ।

फिर एक साथ जारी होते हैं
उस पर कई फ़रमान,
और खिंच जाती है उस पर कमान।

केशों को बाँध लो,
मुस्कान को ढाँप लो।
अपनी सीमा मत भूलो।

मर्यादा हो तुम दो कुलों की,
अपनी जुबान सी लो।

इतनी मर्यादाओं का करते-करते अनुसरण,
वह ऐसे सिमटती है, जैसे हो दासन।

इस चुप कराने और चुप हो जाने से,
उसके अस्तित्व का हो जाता है संकुचन।

परिणीता सिन्हा

मैं और जगत

क्यों चमक भरूँ आँखों में,
जो मुझे कभी खींच न पाई?

इन संसारी रसों में
मैं कभी डूब न पाई।

जड़ित-खचित मालाएँ
आकर्षण की बेला बन
मुझे जगा न पाईं।

मैं जगती-बुझती-सी जीती रही,
संसारी आकर्षण की
टेढ़ी-मेढ़ी रेखाओं में
मैं कभी बंध न पाई।

मुझे तो बाँधा है बस
धरती की नैसर्गिक आभा ने।

मैं झूठ-सत्य के
रहस्य भरे
संसारी भेदों को भी
कभी समझ न पाई।

मैं क्यों जानूँ?
मैं क्यों पूछूँ
प्रश्नों के अर्थ?

भेजा है उसने
यदि धरती पर,
तो उत्तर भी वही देगा।

इसी प्रतीक्षा में
कम से कम
समय तो
रथ पर होगा।

डॉ. सुकेशिनी दीक्षित

शून्यता

कितना सहज और स्वाभाविक है ना,
हमारे इर्द-गिर्द हवा का होना।
कभी रूककर शुक्रिया नहीं कहा हमने,
क्योंकि! वो तो है ही, और रहेगा ही ,
हमें एक-एक साँसों की सौगात देने के लिये,
क्या हो? जो ये रूठ जाये कभी!
क्या! हमने सोचा है कभी?
मनाने का अवसर भी नहीं मिल पायेगा,
और फिर! उसका ना होना ही,
उसके होने का महत्व हमे बतायेगा!
पिता का होना भी तो ऐसे ही है, ना!
होते हैं, तो बस होते हैं।
हमारे लिये, हमारी खुशियो के लिये,
हमारे खाने-पीने हमारे शौक के लिये,
हमारी हर ख्वाहिशों को पूरा करने के लिये!
और जब नहीं होते- तो बस,..
एक बड़ा सा शून्य छोड़ जाते हैं,
दमघोंटू निर्वात की तरह!

मीना शर्मा
रायपुर

कैसे लोग दगा देते हैं

रोते रोते गा लेते हैं।
कैसे लोग दगा देते हैं।

जिनकी भीतर दुनियां उजड़ी।
बाहर बाग लगा लेते हैं ।1।

हम आशिक हैं हम जब चाहें।
घर में चाँद मंगा लेते हैं।2।

मेरी 'साधना ' हम पत्थर में ।
अक्सर दूब उगा लेते हैं ।3।

साधना बैढ़न
सिंगरौली, मध्यप्रदेश

गुरु पूर्णिमा की शुभकामनाएँ

गुरुपूर्णिमा पर विशेष

पूज्य गुरुदेव के 'विराट' श्रीचरणों में सादर प्रणाम।

गुरुदेव,

सादर वंदन।

जब-जब जीवन की राह कठिन हुई, मन विचलित हुआ और परिस्थितियों ने धैर्य की परीक्षा ली, तब-तब आपके स्नेह, आशीर्वाद और प्रेरक वचनों ने मुझे संभाला है। अनेक बार ऐसा लगा कि मैं स्वयं को अकेला पा रहीँ हू, किन्तु उसी क्षण आपके करुणामय सान्निध्य का अनुभव हुआ। ऐसा प्रतीत होता है मानो आपके कृपामय हाथ मेरे सिर पर हैं, जो हर भय, हर निराशा और हर असमंजस को शांत कर देते हैं। यही अनुभूति मुझे आगे बढ़ने का साहस देती है।

गुरुदेव, विगत कुछ समय से स्वास्थ्य की चुनौतियँा निरंतर बनी हुई हैं। उपचार का क्रम चल रहा है। कभी शारीरिक पीड़ा बढ़ जाती है तो कभी मन भी थकने लगता है, किन्तु आपकी प्रेरणा और कृपा का स्मरण मुझे पुनः दृढ़ बना देता है। विश्वास है कि आपकी शुभकामनाँए और आशीर्वाद ही मेरी सबसे बड़ी औषधि हैं।

> ज्ञान का सूर्य आप, दिशा का प्रमाण हैं,
> आप ही तो सत्य का, विमल अभिमान हैं।
> तम को जो मेट दे, आप वो प्रकाश हैं,
> साधक के मन का, अमर विश्वास हैं।
> सत्य की राह पर चलना सिखाते हैं,
> शब्दों से जीवन का अर्थ बताते हैं।
> सच्चे मार्गदर्शक, आप गुरु निष्काम हैं,
> चरणों में आपके, कोटिशः प्रणाम हैं।

आगामी 10–11 अगस्त को मुझे उपचार के अगले चरण के लिए पुनः हैदराबाद जाना है। ईश्वर से प्रार्थना है कि सब कुछ आपके आशीर्वाद से शुभ और सफलतापूर्वक संपन्न हो। मेरी यही विनम्र प्रार्थना है कि अपनी कृपा-दृष्टि सदैव बनाए रखें। मुझे ऐसा ही अनुभव होता रहे कि आपका स्नेहिल हाथ हर पल मेरे मस्तक पर है और मैं आपके संरक्षण में निर्भय होकर जीवन-पथ पर आगे बढ़ रहीँ हू।

आपके प्रति मेरा आभार शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। आपने मुझे केवल मानसिक संबल ही नहीं दिया, बल्कि विपरीत परिस्थितियों में भी विश्वास, धैर्य और सकारात्मक दृष्टि के साथ जीना सिखाया है। आपके स्नेह और मार्गदर्शन का यह ऋण मैं कभी नहीं चुका सकती।

मेरे लिए अपना आशीर्वाद, स्नेह और मार्गदर्शन सदैव बनाए रखिए। आपकी कृपा ही मेरी शक्ति है, मेरा विश्वास है और मेरी सबसे बड़ी पूँजी है।

सपरिवार आपके श्रीचरणों में सादर प्रणाम सहित,

आपकी शिष्या
डॉ. प्रीति समकित सुराना

आत्मबल

भादों की अंधेरी रात। नदी पूरी उफ़ान पर थी। नदी की चौड़ाई इस बखत सवा किलोमीटर तो थी हीं। हल्की बेहद छोटी छोटी बूंदें आसमान से फुहार के रूप में गिर रही थीं।

घटना लगभग पैंतीस साल पहले की है। शहर से लौटने में अनिकेत को काफी देर हो गई थी। अंतिम बस रात नौ बजे पकड़ साढ़े ग्यारह बजे मुख्य चौराहे पर उतर गया। अनिकेत ग्यारवीं का छात्र। शहर में रहकर पढ़ता था। यकायक उसका शाम से हीं मन उचाट हो रहा था। जाने कैसे कैसे ख़्याल मन में आ जा रहे थे। बहरहाल उसने घर जाने के लिए बस पकड़ लिया। उसका गांव नदी के दूसरे किनारे पर था। नदी नाव से हीं पार करनी थी। पर उसका ख्याल इस ओर नहीं गया अन्यथा वह दिन में आता। जब बस से उतरा तो चारों तरफ़ घुप्प अंधेरा था। वह एक मात्र यहां उतरने वाला व्यक्ति था। उसे डेढ़ मील पैदल चलकर नदी के किनारे पहुंचना था। अंधेरा इतना गहरा था कि कुछ भी स्पष्ट नहीं दिख रहा था। सड़क तो थी पर टूटी फूटी। दो मिनट उसे अपने आप को संयत करने में लगा। अपने आत्मबल को मजबूत कर अनिकेत चल पड़ा। वातावरण में झिंगुरो और मेढकों के समवेत स्वरों से अजीब सा माहौल बन रहा था। तभी कुछ दूर पटरी से रेल धड़धड़ाती निकल गई। बेहद शोर के बाद गहरा सन्नाटा पसर गया। अपने हीं आहट से अनिकेत चौंक जा रहा था। उसके जूते की खट-खट की आवाज गूंज रही थी। युवा अनिकेत थोड़ा असहज जरूर था पर अपने आत्मबल को मजबूत कर आगे बढ़ता रहा। रह-रहकर दूर कहीं पपीहा जोर से बोल उठता। पूरा वातावरण जैसे कांप जाता। बस्ती दूर थी। हवा एकदम बंद थी। हल्की फुहारें बरसात का अहसास करा रहीं थीं।

किनारे के गांव के पेड़ों की हल्की छाया दिखने लगी थी। अनिकेत के क़दम अपने आप तेज हो गये। वह जल्दी से जल्दी किनारे पहुंचना चाहता था।

उसे क्या मालूम था कि किनारे पर और भारी आफ़त से सामना होने वाला था। खैर किनारे पर समस्या और विकट थी।न कोई नाव ना कोई मांझी। शायद हवा ने पुरवाई रूख़ अख्तियार कर लिया था। रह-रहकर किनारे से लहरें टकरा रहीं थीं। खूब बड़ी सी मालवाहक नाव किनारे पर लहरों से टकरा रही थी। उसकी विशालता और माल का वजन इतना ज्यादा था कि लहरें उसको बहुत कंपित नहीं कर पा रही थी।

कुछ देर अनिकेत निरुपाय सा आंखें फाड़कर चारों तरफ़ देखता रहा। उसके सामने उफनती नदी और पीछे वह लौट नहीं सकता था। उसके दिमाग ने काम करना बंद कर दिया।

बगल में रखे पत्थर पर वह बैठ गया। पूरा गांव गहरी नींद की आगोश में था। कभी कभी कुत्तों के भूकने की आवाज सुनाई दे रही थी।वह इस गांव में किसी को जानता भी नहीं था। उस समय फोन की भी सुविधा नहीं थी। घाट के ठेकेदार की झोपड़ी भी खाली थी। खाली जमीन और पसरा सन्नाटा। उसकी आंखें अब अंधेरे से अभ्यस्त हो चुकी थी। वह चौकन्ना था क्यूंकि सांप बिच्छुओं का भी इस मौसम में खतरा था।

तभी उसे कोई आदमी आता दिखाई दिया। हाथ में लालटेन लिए वह साया करीब आता जा रहा था। अनिकेत एक बार घबराया पर तुरंत अपने आप को संयत कर लिया। उसके पास कोई ऐसी कीमती वस्तु नहीं थी कि लूट जाने का खतरा हो। थोड़े बहुत पैसे थे। पढ़ने वाले बच्चों को पास गिने गिनाए रूपये मिलते थे। आगंतुक एकदम पास आ गया और लालटेन ऊंचा कर पहचानने की कोशिश करने लगा। अनिकेत भी ध्यान से देखने लगा।

सफेद बेतरतीब बढ़ी दाढ़ी , गहरा सांवला रंग , मझोले कद का आदमी। उसे चेहरा जाना पहचाना लगा। अनिकेत ने कहा महावीर दद्दा। महावीर मांझी भी अनिकेत को पहचान चुका था। महावीर उसी के गांव का मल्लाह था। अब अनिकेत थोड़ा निश्चिंत हुआ। पर समस्या उस पार जाने की थी। महावीर ने कहा कि दरियाव में ऊंची लहर उठ रही है। बड़ी नाव सब दूसरे किनारे पर थी। उस पार महावीर को भी जाना था। पर कैसे यह समझ नहीं आ रहा था। महावीर ने कहा डरोगे तो नहीं। मझधार में नाव बहुत डगमगाएगी। रात के साढ़े बारह बज चुके थे। अनिकेत ने सहमति जताई। महावीर ने उसे अपने साथ सावधानी से ढलान उतरने के कहा। वो दोनों किनारे पर खड़ी विशाल नाव के पास पहुंचे। तेज हवा से भक्क से लालटेन बुझ गई। महावीर ने अनिकेत को वहीं रुकने के लिए कह वह विशाल नाव से लगे रस्सी नुमा सीढ़ी पर चढ़ने लगा। कुछ देर तक अस्फुट आवाज़ सुनाई देती रही। फिर एक और आदमी महावीर के साथ नाव से उतरता दिखाई दिया।

अनिकेत को थकान के साथ साथ बहुत तेज भूख भी लग गई थी। महावीर के साथ आया आदमी वो भी मांझी ही था । बड़ी नाव से लगकर बंधी एक बेहद छोटी सी नाव को खिंचकर ला रहा था। इसे पंछुइया बोलते थे। यह सिर्फ मछली पकड़ने के लिए इस्तेमाल होती थी। एक बार फिर अनिकेत ने अपने आत्मबल को मजबूत किया और नाव में चढ़ गया। चूंकि बहाव बहुत ज्यादा था इसलिए लगभग एक किलोमीटर नाव को उल्टी दिशा में खेना पड़ा। नाव ने ज्यों किनारा छोड़ा वह बहुत तेजी से धारा के साथ बहने लगी। पंछुइया नाव में पतवार नहीं होता। बहरहाल चप्पू को हीं पतवार की जगह बड़ी नाव वाला आदमी पकड़े था। नाव बही जा रही थी। अनिकेत को अच्छी तरह तैरना भी नहीं आता था। जब नाव बीच मझधार में पहुंची तो दृश्य अकल्पनीय हो गया। नाव को लहरें कभी इधर तो कभी उधर खिलौने के मानिंद उछालने लगी। महावीर अनिकेत के पास ही बैठा था। उसे लहरों का अंदाजा था। उसने हिलने डुलने को मना किया और बोला घबराओ नही। करीब पांच मिनट तक तो अनिकेत की सांस हलक में अटकी रही। किनारे पर लगे पेड़ों की छाया अब दिखने लगी थी। कुछ मिनटों में नाव किनारे लग गई। अनिकेत ने गहरी सांस ली। थकावट और भूख दोनों गायब हो चुके थे। मुंहमांगा पैसा दे और धन्यवाद बोल अनिकेत ढलान चढ़ने लगा तो महावीर ने रोका और कहा वह भी साथ घर तक चलेगा। मिट्टी कीचड़ से लथपथ अनिकेत आधे घंटे में घर पहुंचा। सब सो रहे थे सिर्फ मां जाग रही थी। उसने आवाज दी। महावीर को उसने कुछ दूर पहले हीं लौटा दिया था।

आवाज़ पहचान मां दौड़ी आई। इतनी रात गए कैसे अनिकेत आ पाया। मां बहुत आश्चर्य हुआ। मां ने कहा कि वह तुरंत कपड़े बदले , वह उसके भोजन का इंतजाम करतीं हैं। दो बज चुके थे। साढ़े तीन घंटे कैसे बीता यह अनिकेत का मन हीं जानता था। अपने आत्मबल और साहस से अनिकेत विषम परिस्थिति का बहादुरी से सामना किया और घर पहुंच पाया।

श्रीधर कृष्णार्थ
बनारस मिर्जापुर,
उत्तर प्रदेश

www.antrashabdshakti.com
संपादक : डॉ. प्रीति समकित सुराना
वारासिवनी (म.प्र.)

पं.क्र.(04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
प्रकाशन एवं बहुउद्देशीय संस्था

वेब अंक
गुरुवार, 30 जुलाई 2026

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

कब मैं उसका नाम ढूँढना छोड़ पाऊँगा?

कब मैं उसका नाम ढूँढना छोड़ पाऊँगा?
जैसे मुझे पहले से पता है कि जवाब मुझे फिर दर्द देगा,
फिर भी मैं वही सवाल पूछना चाहता हूँ।
उसके नाम का हर अक्षर टाइप करते समय
जो एहसास मेरे भीतर उठता है,
वह अब भी वैसा ही है।
जानता हूँ कि मुझे इस कहानी को खत्म कर देना चाहिए,
पर मैं अब भी उसके खेल में उलझा हुआ हूँ।
आज रोया, कल रोया, उससे पहले भी रोया,
फिर भी मैं उसे उसी तरह खोजता हूँ।
हमने साथ सफ़र पर जाने के सपने देखे थे,
पर उसने मुझे अधूरी उम्मीदों की सलाईन पर छोड़ दिया।
उसका ख़याल आते ही शर्म महसूस होती है,
उसका चेहरा याद आते ही मन पागल हो उठता है।
सालों हो गए उसे जाते हुए,
वह तो अपनी उड़ान भर चुकी थी,
और मैं अब तक अपना जहाज़ भी नहीं पकड़ पाया।
अगर वह अब भी मेरी ज़िंदगी में होती,
तो उसके नाम के सिर्फ़ शुरुआती अक्षर ही काफ़ी होते,
पर आज भी मैं उसका पूरा नाम टाइप करता हूँ।
और हर बार ऐसा लगता है जैसे मेरी धड़कनें बेकाबू हो जाती हैं,
मानो साँसों की डोर भी
धीरे-धीरे टूटने लगती है।

सम्यक कोचर, कटंगी

कैसे हो तुम?

वो नहीं सुनना जो सबको बताते हो तुम,
वो जानना है जो सबसे छुपाते हो तुम।
तो बताओ ना, कैसे हो तुम?

अक्सर कहते हो, "बढ़िया हूँ" हाल पूछने पर,
मुस्कुराते रहते हो, कोई दुख भी होने पर।
खूब सिखाया है सहना तुम्हें दुनिया ने,
खूब डराया है अपने दिल की बातें कहने से।

कहने दो जो कहता है कि तुम रो नहीं सकते,
करने दो चर्चा कि तुम दुखी हो नहीं सकते।
हक़ तुम्हें भी है ग़म में आँसू बहाने का,
हक़ तुम्हें भी है खुश होकर खिलखिलाने का।

मत दफ़नाओ अपनी भावनाएँ
अंदर किसी के डर से।
कह दो सारी बातें
जो निकलें दिल से।

कोई सुने न सुने, पर मैं सुनूँगी,
तुम्हारे कहे बिना ही सब समझूँगी।
तो अब सच बताओ ना,
कैसे हो तुम?

श्रुति कोचर, कटंगी

कविता

यूँ तो आसान है नहीं ज़िंदगी...
यूँ तो आसान है नहीं ज़िंदगी,
कहीं ख़्वाहिशों की मार है,
तो कहीं दिलों में तकरार है।
चलना तो अकेले ही है सबको,
पर आसान हो जाए रास्ता,
अगर हिस्से में किसी का प्यार है।
ये जो दिलों में रखे हुए हैं मुहब्बत,
पूछो ज़रा उनसे,
करना कब इज़हार है?
ज़िंदगी की जंग तो चलती रहेगी,
पर जहाँ अपनों का साथ है,
वहाँ हर दिन त्योहार है।
खुश रहना इतना मुश्किल तो नहीं,
फिर क्यों मुस्कुराने से इनकार है?
और मुझे...
और मुझे ये कहना है सबसे—
अपनी कहानी के सितारे बनिए,
क्योंकि किसी और की कहानी में
तो हम सब गुनहगार हैं।

श्रेया कोचर, कटंगी

हवा, पानी और तुम...!

हवा चलती है, कभी धीमी, कभी बेकाबू।
कभी लगता है बस छूकर निकल जाएगी,
और कभी, जैसे भीतर तक उतर आएगी।
वो अदृश्य होकर भी साथ रहती है,
कानों में कोई अनकही बात फुसफुसाती हुई,
जिसे समझना शब्दों से नहीं, एहसास से होता है।

पानी बहता है, अपनी ही लय में,
कभी बूँद बनकर पलकों पर टिक जाता,
कभी लहर बनकर किनारों को डुबो देता।
वो शांत भी है, गहराई भी।
कभी लगता है जैसे सब धुल गया,
और कभी, जैसे सब बह गया।

और तुम...
तुम हवा जैसे छूकर गुजरते भी हो,
और पानी जैसे ठहरकर रह जाते भी।
तुम्हारी उपस्थिति का कोई रूप नहीं,
पर अनुपस्थिति की आवाज़ हर जगह सुनाई देती है।
तुम वो "सागर किनारा" हो, जहाँ हवा भी थमती नहीं
और पानी भी सूखता नहीं।

कभी लगता है तुम किसी बूँद में घुले हो,
कभी किसी झोंके में बिखरे,
कभी किसी गंध में, किसी छुअन में, किसी शब्द में...
तुम हर जगह हो, पर दिखाई नहीं देते।
तुम्हारा होना हवा की तरह स्वाभाविक,
पानी की तरह आवश्यक है।

कभी तुमसे बात करती हूँ,
तो लगता है जैसे हवाओं ने जवाब दिया,
और जब आँखें बंद करती हूँ,
तो तुम्हारा प्रतिबिम्ब पानी पर झिलमिलाता दिखता है।
शायद यही प्रेम का सबसे सच्चा रूप है,
जहाँ न पकड़ने की चाह है, न खोने का डर।
सिर्फ़ अनुभव है, हवा, पानी और तुम का...

डॉ. प्रीति समकित सुराना

ज़िंदगी की भागदौड़ में सुकून की तलाश

सुबह से शाम तक भाग रहा,
हर पल कोई हिसाब लिए।
हाथों में सपनों की गठरी,
आँखों में अनगिन ख़्वाब लिए।

दौलत, शोहरत, नाम की चाह में,
मन का आँगन सूना है।
भीड़ बहुत है चारों ओर,
पर भीतर कितना सूना है।

हँसी होंठों पर सज जाती है,
पर आँखें कुछ कह जाती हैं।
ज़िंदगी की इस दौड़ में अक्सर,
साँसें भी थक-सी जाती हैं।

सुकून कहीं बाज़ारों में नहीं,
न ऊँचे महलों की दीवारों में।
वह तो माँ की मीठी लोरी में,
बचपन की भोली पुकारों में।

वह बरगद की शीतल छाया में,
बारिश की पहली फुहारों में।
अपनों के सच्चे आलिंगन में,
प्रेम भरे मधुर व्यवहारों में।

थोड़ा ठहरो, स्वयं से मिलो,
मन की आवाज़ भी सुन लेना।
कुछ पल प्रकृति के संग बैठकर,
जीवन का अर्थ भी चुन लेना।

जीत वही जो मुस्कान बचाए,
रिश्तों का सम्मान रखे।
भागदौड़ में भी अपने भीतर,
शांति का एक स्थान रखे।

याद रहे—जीवन केवल मंज़िल नहीं,
हर पल का मधुर अहसास भी है।
ज़िंदगी की भागदौड़ में जो
मन को पा ले—वही सच्चा सुकून, वही
सच्चा विकास भी है।

ऋतु कोचर,
कटंगी

अन्तरा शब्दशक्ति – हिन्दी साहित्य, प्रकाशन और रचनाकारों के सशक्तिकरण का राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय मंच।

वे बूढ़े हाथ

बूढ़े, काँपते हाथों से थामे
एक-दूसरे के हाथ,
शून्य में निहारते, खामोश दोनों साथ।

मन तो कहता है—
जिगर का टुकड़ा आएगा,
इन बूढ़े हाथों को हाथों में लेकर सहलाएगा।

भूतकाल आँखों में
चलचित्र की भाँति घूमने लगा,
बेटे का रुदन कानों में गूँजने लगा।

प्यार से निहारा उसे,
सीने से लगाया,
पाकर उसे जीवन अपना धन्य बनाया।

हाथों में हाथ लेकर
उसे चलना सिखाया,
ज़िंदगी की दौड़ में
आगे रहना सिखाया।

उसने भी तो
हमारा नाम रोशन कर दिखाया,
उत्कर्ष उसका देख
मन हर्षाया।

विदेश की नौकरी ने
बेटे को भरमाया,
बुढ़ापे की लाठी बेटा
हुआ पराया।

ऐसा लगा,
मानो हम पर वज्राघात हुआ।
मन बड़ा पापी है,
उम्मीद नहीं छोड़ता।

"बेटा वापस आएगा"—
बस यही बात सोचता।

आ जाओ बेटे,
थाम लो बूढ़े हाथों को,
सिर पर रख दो अपने
हमारे काँपते हाथों को।

ढेर सारी नेमतें
होंगी तुम्हारे पास,
सारे जहाँ की खुशियाँ
होंगी तुम्हारे साथ।

परमात्मा तो
आत्मा में बसते हैं,
सबको अपने कर्मों का
फल देते हैं।

हमने अपनी ज़िम्मेदारियाँ
हमेशा निभाई,
अपनी खुशियों की आहुति देकर
तुम्हारी दुनिया बनाई।

हम तो माँ-बाप हैं,
माफ़ी दे देंगे,
पर ईश्वर के न्याय का
तुम क्या करोगे?

समय फिर
अपने को दोहराएगा,
तुम्हारी गलतियों का
अहसास तुम्हें कराएगा।

मंजुलता गुप्ता नीखरा, मुंबई

जीवन गीत

मेरा मुझ तक ही पहुंच पाए
इतनी धीमी धुन पसंद है,,,,

स्वर ताल से भी बखूबी मिले
जीवन का ये गीत पसंद है,,,

रूठ जाए खुद से कभी तो
खुद को मनाना पसंद है,,,,,

हर हाल में मुझे तो बस
मुस्कुराना ही पसंद है,,,,,!!

स्वाति जैन

बरसात

मेघ अषाढ़ी नभ पर छाए
दिवस लगे ज्यों रात।
गरज-गरज कर शोर मचाएं
घोर करें बरसात।।

दूर देश में प्रियतम बैठे
आई उनकी याद।
मन ही मन संदेशा भेजा
प्रिया करे संवाद।
काली रजनी मुझे डराए
थर-थर काँपे गात।
गरज-गरज कर शोर मचाएं
घोर करें बरसात ।

पायल जैसे छम-छम करती
बरखा गाये गीत।
बूंदों की सरगम कहती
जल्दी आओ मीत।
रैन मिलन की बीत रही है
हँसता सूर्य-प्रभात,
गरज-गरज कर शोर मचाएं
घोर करें बरसात।

नभ के आंगन बिजली नाचे
लेकर हाथ कटार।
डम-डम-डम-डम ढोल बजाएं
हर्षित मेघ अपार।
याद सजन की बहुत सताए
उमड़ रहे जज्बात।
गरज-गरज कर शोर मचाएँ
घोर करें बरसात।

मीरा भार्गव सुदर्शना

गुब्बारे वाला

बाजार के दिन वो आता है
अपनी दुकान लगाता है,
गुब्बारों का सुन्दर गुच्छा
लेकर चौराहे पर जाता है।

कड़ी धूप में बहे पसीना
पानी पीकर रह जाता है,
रोज़ी-रोटी के चक्कर में
खाना-पीना खो जाता है।

लाल, हरे, नीले, पीले
गुब्बारे लेकर आता है,
खिली धूप में दूर से ही
रंग-बिरंगा चमक जाता है.

कुछ गुब्बारे हैं छोटे से
और कुछ हैं थोड़े बड़े,
सबको एक-एक धागे से बाँधा
जो हवा की दिशा में उड़े।

शायद एक दिन उड़ जाने दे
हम देखेंगे ऊपर तैरते हुए,
हम नीचे खड़े निहारेंगे
ऊँचे-नीले अम्बर को छूते हुए।

गुब्बारे वाला आया जी
गुब्बारे वाला आया,
लाल, हरे, पीले, नीले
गुब्बारे लेकर आया।
गुब्बारे वाला आया...

उद्देश्य तिवारी 'उदय'
सतना, मध्यप्रदेश

सीधी सच्ची बातें

सीधी सच्ची बातें करते ,
नहीं किसी से हम हैं डरते।

जो जीना था जी कर देखा,
जीने में कितना है मरते।

वह मेरे सपनों में आता,
हम उसकी तन्हाई हरते।

चारों ओर मचा कोलाहल,
त्राहि-त्राहि सब जन हैं करते।

पास मेरे तुम आकर देखो,
संत्रासों के हिरने चरते।

ढका छुपा रखना क्या ख़ुद को,
खुलती हैं परतों की परतें।

शांति पट्टिका लगी है जिस पथ,
अमन चैन न हम उसमें भरते।

वाई.वेद प्रकाश
द्वारा विद्या रमण फाउंडेशन
रायबरेली (उत्तर प्रदेश)